Chap-6

षष्ठ अध्याय

शैलेश मटियानी की कहानियों में दलित जीवन का चित्रण

प्रास्ताविक : ---

जहाँ तक हिन्दी कहानी-साहित्य का संबंध है, शैलेश मटियानी का योगदान स्मरणीय और शलाघनीय रहेगा। पूर्ववर्ती पृष्ठों में निरूपित हुआ है कि हिन्दी की शिविरपंथी आलोचना के कारण उनके एतद्विषयक कृतित्व के साथ उचित न्याय नहीं हुआ है। कहानी कहना तो आदमी कहने के बराबर है। और आदमी को कहने के लिए, आदमी का जिगर चाहिए, उसके जीवन का बिल्कुल नज़दीकी और गहरा अनुभव चाहिए, आदमी की आदमीयत को पहचानने की खोजी नजर चाहिए। संवेदना और दर्द का खजाना चाहिए और उनकी कहानियों को पढ़ जाने के बाद हम निश्चयपूर्वक कह सकते हैं कि मटियानीजी में ये सब है, और है इतना ही नहीं प्रभृति मात्रा में है और इसलिए जैसे-जैसे समय बीतता जाएगा उनका कृतित्त्व और भी उभरकर आयेगा। कहानीकार की नज़र आदमी पर होती है और पूरे संसार में आदमी कई तरह के होते हैं -- अमीर होते हैं, गरीब होते हैं, उच्चवर्गीय होते हैं, मध्यवर्गीय होते हैं, निम्नवर्गीय होते हैं, निम्नतमवर्गीय होते हैं, शासक होते हैं, शासित होते हैं, शोषक होते हैं,

शोषित होते हैं, पीड़क होते हैं, पीड़ित होते हैं, दलक होते हैं, दलित होते हैं, अच्छे होते हैं, बुरे होते हैं; और फिर ऐसा भी नहीं है कि ये और ऐसे आदमी किसी युग-विशेष और समय-विशेष में ही होते हैं, इस प्रकार के आदमी हर युग और समय में मिलते हैं, हर देश और प्रदेश में मिलते हैं और कहानीकार इनकी खोज में रहता है। इनको अपने भीतर खोजता है, इनको अपने बाहर खोजता है। यहाँ एक बात ध्यातव्य है कि जब मैं आदमी कहती हूँ तो मेरा अभिप्राय मानव-जाति से है और मानव जाति में स्त्री-पुरूष दोनों आते हैं। हालाँकि यह दीगर बात है कि--- "आदमी जाता है" ही कहा जाता है, "आदमी जाती है" ऐसा नहीं कहा जाता। पर यह दीगर बात है।

पर शिविरपंथी न होने के कारण जहाँ वैयक्तिक रूप से, आर्थिक-सामाजिक-राजनीतिक दृष्टि से मटियानी जी घाटे में रहे हैं; वहाँ एक कहानीकार की दृष्टि से फायदे में रहे हैं। उनमें किसी प्रकार का पूर्वाग्रह, दुराग्रह या हठाग्रह नहीं है। जहाँ कुछ शिविरपंथी लेखकों ने अमीर आदमियों की बुराइयों को ही लक्षित किया है, उनकी अच्छाइयों को नहीं; वहाँ मटियानी ने उनके भीतर के प्रकाश को भी देखा है। उच्चवर्गीय और उच्चवर्णीय लोगों के भी अच्छे चित्र उन्होंने दिये हैं। क्योंकि मटियानी जी शास्त्र नहीं, समाज लिख रहे हैं। माँ, महतारी और बहन उनके लेखन के केन्द्र में है; पर स्त्री का वह रूप भी है जो निहायत भोंड़ा और कुरूप है। अमीर स्त्रियों में भी सब कामुक, सब विलासी, सब बेवफा है, ऐसा नहीं है। मटियानी जी ने नारी के सभी रूपों को लिया है।

एक बात यह भी है कि मटियानी जी की कहानियों को पढ़ते समय, या उनका अनुशीलन करते समय, दलित-साहित्य के संदर्भ में, उसकी संकीर्ण परिधि से बाहर निकलना पड़ता है ; क्योंकि यहाँ विशेषतः बम्बई के नगरीय परिवेश की जहाँ बात है, मटियानी जी ने जिस जीवन का चित्रण किया है, वह वर्ण और जाति के परे है। यहाँ फुटपाथ का जीवन है, झुग्गी-झोंपड़ियों का जीवन है, पाइपों में रहने वाले लोग हैं, बदमाश-

गुण्डे-जेबकतरे हैं, रंडियाँ हैं, वेश्याएँ हैं, भिखारी है हैं, कोढ़ी हैं, सेठों के यहाँ काम करने वाले रामा लोग हैं और इन सबका जीवन बड़ा ही शोषित, गर्हित, पीड़ित और अतएव दलित है।

प्रस्तुत अध्याय में "सतजुगिया आदमी", "धुधुतिया त्यौहार", "नंगा", "लीक", "एक कॉप चा : दो खारी बिस्किट", "चिथड़े", "गरीबुल्ला", "देट माय फादर बालजी", "पत्थर", "फर्क, बस इतना है", "बिट्ठल", "चील", "प्यास", "इब्बूमलंग", "मिट्टी", "मैमूद", "भय", "रहमतुल्ला", "दो दुःखों का एक सुख", "गोपुली गफूरन", "प्रेतमुक्ति", "महाभोज", "अहिंसा", "हत्यारे", "भंवरे की जात", "बर्फ की चट्टानें", "कुसुमी", "सावित्री", "जिबूका", "चुनाव", "लाटी", "हलाल", "कपिला", "भविष्य", "इल्लेस्वामी", आदि लगभग पैंतीस कहानियाँ जो दलित-जीवन से संबंद्ध हैं, उनके आधार पर दलित-जीवन के विविध आयामों और प्रश्नों को विश्लेषित करने का उपक्रम है।

(क) दलित -जीवन का एक अलग आयाम : ---

जैसा कि ऊपर संकेतित किया गया है, मटियानी जी की कहानियों में दलित-जीवन का एक नया और अलग आयाम मिलता है। यह आयाम है उस दलित-गर्हित जीवन का जिसे शायद समाज की वर्गीय विभावना में श्रेणीबद्ध करना भी मुश्किल है। सामान्यतया हम उच्चवर्ग, मध्यवर्ग और निम्नवर्ग की बात करते हैं। उसमें इधर मध्यवर्ग के और दो विभाजन आये हैं -- उच्चमध्यमवर्ग और निम्नमध्यवर्ग। निम्नवर्ग में भी निम्नतम वर्ग जैसा विभाजन किया जा सकता है। परन्तु मटियानी जी की कहानियों में बम्बई, इलाहाबाद, अल्मोड़ा आदि शहरों के एक वर्ग को चित्रित किया गया है, जिसे वर्गीकृत करना अत्यन्त जटिल कार्य है। यह वर्ग उन लोगों का है जिनमें भिखारी, कोढ़ी, लूले-लंगड़े, अपाहिज, सिफीलिस जैसी

गुप्त बीमारियों के शिकार, लुच्चे-लफंगे, बदमाश, तड़ीपार-गुण्ड़े, माफिया-ग्रूप से जुड़े लोग, ढोंगी और भेषधारी साधु आदि आते हैं। बम्बई के वे रामालोग आते हैं, जो बड़े-बड़े सेठों के यहाँ कपड़ा-बर्तन-झाडू-पोंचा-रसोई आदि का काम करते हैं, साथ ही सेठ-सेठानियों के साथ "कबुतरगीरी" भी उन्हें करनी पड़ती है। प्रेम यदि मन से किया जाय तब तो व्यक्ति स्वस्थ रह सकता है, परन्तु जबरदस्ती का प्रेम, प्रेम नहीं वासना है और इन रामाओं के पक्ष में तो वासना भी सेठ-सेठानियों और उनके "बेबीलोग" के साथ है, इनका उपयोग तो एक यौन-मशीन की तरह होता है। "बिट्ठल" कहानी का बिठल रूस्तमजी सेठ के यहाँ काम करता है। एक दिन बाजार में उसे वस्ताद(उस्ताद) मिल जाते हैं। वे बिट्ठल को पूछते हैं--"क्यों रे ! किधर चला गया था? ......बिट्ठल चुप रहा।....खामूस क्यों है रे ?.....कुछ बात नहीं है,वस्ताद ! ......खास बात कैसे नहीं है बेटा ! कपड़े खूब शानदार पहने है, लेकिन चेहरे की रौनक उड़ गयी है ....कहीं बड़ी जगह फंस तो नहीं गया है, बेटे ?"

इसी कहानी में रूस्तमजी सेठ की बेटी रूस्तमा बिट्ठल को कहती है- "पिछले बरस भी पापा जी रत्नागिरी से एक रामा लेके आए थे। वह पापाजी, बड़ी बाई और मेरे को.... तीनों को संभालता था।"[२] इस प्रकार बम्बई में एक वर्ग ऐसा मिलता है, जिसे हम "पुरूष-वेश्या"कह सकते हैं। पाश्चात्य महानगरों में तो बाकायदा "मेल-प्रास्टिट्युशन" होता है, हमारे यहाँ वह प्रच्छन्न रूप में पाया जाता है।

मटियानी जी की कहानियों में भिखारियों का चित्रण भी खूब मिलता है। "पत्थर" कहानी का रमजानी अपनी बीबी और दो-तीन साल के बेटे का इस्तेमाल भीख के लिए करता है। वह कादरमियाँ नामक एक लंगड़े भिखारी को अपना बेटा किराये पर भीख मांगने के लिए देता है। कादरमियां भीख मांगते थे, पर उन्होंने देखा कि यदि साथ में कोई छोटा बच्चा हो तो भीख ज्यादा मिल सकती है।[३] "फर्क, बस इतना है" का

सद्दू पहले तो बम्बई में एक सेठ के यहाँ ''रामा'' था, पर बाद में सेठ उसे निकाल देता है,तब कुछ समय के लिए वह कुलीगिरी करता है । वहाँ भी पुलिस को हप्ता देना पड़ता था, अतः वह भिखारी बन जाता है । महीने में चार आने का सिरका लाना पड़ता है, उसे लगा-लुगूकर वह कोढ़ियों का भेष बना लेता है । दो-चार घण्टे में अच्छी कमाई हो जाती है, फिर नहा-वहाकर छैला बनकर बम्बई में घूमता रहता है । [४]

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि मटियानी जी ने बम्बई की यह कोढ़युक्त गर्हित जिन्दगी का तथा अन्य नगरों की भी इसी प्रकार की जिन्दगी का नग्न-यथार्थ चित्रण ''एक कॉप चा : दो खारी बिस्किट'', ''गरीबुल्ला'', ''दैट माय फादर बालजी'', ''चील'', ''प्यास'', ''इब्बूमलंग'', ''मिट्टी'', ''भय'',''दो दुखों का एक सुख'', ''लाटी'', तथा ''इल्लेस्वामी'', प्रभृति कहानियों में मिलता है ।

(ख) भिखारियों और कोढ़ियों का संसार : ---

मटियानी जी की कहानियों में जैसा कि ऊपर कहा गया है भिखारियों और कोढ़ियों का एक संसार- एक उपेक्षित, पीड़ित और दलित संसार- हमें मिलता है, जिसे पढ़कर-देखकर हमारे रोंगटे खड़े हो सकते हैं । फुटपाथों और गंदी झोपड़पट्टियों में आबाद यह संसार नियोन लाईट वाले इस दूसरे संसार की मानो खिल्ली उड़ता है । यहाँ जिस प्रकार के लोगों के जीवन को लेखक ने चित्रित किया है, उसे वर्गीकृत नहीं कर सकते । ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक के जीवन का अभिशाप ही माना यहाँ वरदान सिद्ध हुआ है । यदि शैलेश मटियानी शुरू से ही किसी अच्छी नौकरी में होते, तो ये कहानियाँ जो वे लिख पाए हैं, नहीं लिख पाते । उनमें प्रतिभा है, लिखने की कला और शैली है, भाषा पर गजब का प्रभुत्व है; अतः वे हिन्दी के लेखक या कवि तो हो सकते थे, पर जिन कारणों से उनको जैकलंदन, ज्यां जेने या गोर्की कहा जाता है, प्रेमचंद के

बाद का एक महान कहानीकार कहा जाता है; उतने बड़े लेखक वे न होते ।[५]

"प्यासा" कहानी में उन्होंने बम्बई में चलने वाले भिखारियों के व्यवसाय का लोमहर्षक चित्रण किया है । इस कहानी में पांडुरंग मामा का तो व्यवसाय ही भीख मंगवाने का है । इस "लाइन" में उनको बयालिस साल हो गये हैं । इन बयालिस सालों में दश साल खुद भीख मांगी है और बत्तीस वर्षों से दूसरों से भीख मंगवा रहे हैं ।[६] इस व्यवसाय में उन्होंने लगभग पचास बच्चे छोड़ रखे हैं । इस भीख मांगने के व्यवसाय से उन्होंने बम्बई के घाटकोपर विस्तार में बीड़ियों का कारखाना खोल रखा है । मामा का नेट-वर्क बड़ा तगड़ा है । कहीं कोई अनाथ बच्चा मिल जाता है, वे उसे उठा लाते हैं । कई बार अनाथाश्रमों के संचालकों के साथ साठ-गाँठ करके, उन बच्चों को हासिल करते हैं । "प्यासा" कहानी के शंकरिया को वे अनाथाश्रम से लाये थे । मामा कृष्णाबाई को कहते हैं --"बाई, नकद पचास की रकम और भानजे का रिश्ता लगा करके इस छोकरे को खरीदा है । सूरत का गोरा और खूबसूरत है । भीख मांगते समय होशियारी से काम लोगी तो, चांदी पिटवा देगा छोकरा ।

.......तो बाई, जब तक इस छोकरे से बिजनेस करोगी, एक रूपया रोज लूँगा और अगर तुम्हारी किसी लापरवाही या बीमारी से यह मर गया तो तुम्हें पूरे पचास की रकम एक मुश्त मुझे देनी होगी ।"[७]

इस पर जब कृष्णाबाई कहती है कि फुटपाली और झोपड़पट्टी वाले बच्चे ज्यादा जीते हैं , यह तो "मस्के की टिकिया के माफिक है तो मर भी सकता है । इस पर पांडु मामा उसे अपने व्यवसाय "गुरू" सिखाते हैं -----अरी, कमअकल ! जब तक जिन्दा रहेगा तब तक तो चांदी पिटवाएगा छोकरा तेरे लिए, मगर जिस दिन मर गया, उस दिन अशर्फियाँ उगल देगा, अशर्फियाँ ।"[८] यहाँ मामा का इशारा इस बात की ओर है कि मृत बच्चे की लाश को लेकर भीख मांगी जा सकती है और सर्दी के दिनों में बच्चे की मिट्टी को दो-तीन दिन सही-सलामत रखना

कोई बड़ी बात नहीं हे । मामा कहते हैं --"जिस समय तू इस कपास के फूल की माफिक गोरे छोकरे की मिट्टी को गोद में लेकर भीख मांगेगी, तो दस-रतली डालडे का डिब्बा चांदी के चिल्लर से भर जाएगा।"[९]

"भय" कहानी का अनाम नाय तो सीताराम नाम एक भिखारी की लावारिस लाश को ही कहीं से उठा लाता है । और उस लाश पर झूठ-मूठ का सियापा करने के लिए ननकू की औरत को दो बच्चों के साथ बुला लाता है । लाश पर जो पैसे फेके जायेंगे उसके तीन हिस्से करने की बात थी, परंतु बाद में एक पुलिसवाला भी उसमें अडंगा लगाता है ।

"दो दुखों का एक सुख" कहानी में लेखक ने मिरदुला कानी, करमिया कोढ़ी और अंधे सूरदास की त्रिपुटी को मंदिरों के आगे भीख मांगते बताया है । मिरदुला कानी जगत मिस्त्री जो कि डोम जाति का है, उसके साथ रहती है । मणिहार कलारों का झुण्ड उसे उठा कर ले गया था और उसकी बड़ी दुर्गत करके मेले में ही उसे छोड़ दिया था। वहाँ से जगत मिस्त्री उसे उठा लाया था और उससे भीख मंगवाता था। एक दिन वह अपनी भीख की रकम रामलीला के चन्दे में दे देती है , उस पर जगत मिस्त्री उसकी बहुत बुरी तरह से पिटाई करता है।[१०] इस पर करमिया कोढ़ी उसे यह समझाकर अपनी धर्मशाला में ले जाता है कि सभी भिखारियों की एक ही बिरादरी है और एक भिखारी के दर्द को भिखारी ही समझ सकता है । मिरदुला की अंधे सूरदास से अच्छी पटती थी, इसलिए करमिया सूरदास को भी अपने साथ कर लेता है, क्योंकि उसे मालूम है कि मिरदुला सूरदास के साथ रहने के लिए राजी हो जायेगी तो उसे भी कभी उसके साथ सोने का मौका मिल सकता है।[११] सूरदास और मिरदुला साथ-साथ सोते हैं, फिर करमिया कोढ़ी भी सर्दी के बहाने साथ हो लेता है । कानी करमिया को इसलिए बरदाश्त कर लेती है कि उसके कारण उसे यह छत और सूरदास का साथ मिला था। वह इन दोनों को खोना नहीं चाहती। सूरदास ने भी यह समझाया है । पर करमिया के कारण ही उसे मिरदुला का साथ मिला था। इस प्रकार ये तीनों पति-पत्नी की तरह रहते हैं। दो पति

और एक पत्नी। ऐसे में मिरदुला जब गर्भवती होती है तो दोनों इस उधेड़बुन में और कल्पना में खोये रहते हैं कि मिरदुला का बच्चा किसका होगा। और कदाचित बहुत प्रसन्न नहीं होते जब उन्हें मालूम होता है कि बच्चा तो चोखा है, न अंधा है न कोढ़ी।[१२]

यहाँ मटियानी जी ने एक दूसरा आयाम भी प्रस्तुत किया है। कुछ तो सचमुच के कोढ़ी होते हैं, परंतु कुछ "फर्क, बस इतना है" कहानी के सद्दू जैसे भी होते हैं, जो सिरका लगाकर और चिथड़े लपेटकर कोढ़ियों का भेष बनाकर भीख मांगते हैं।[१३]

"मिट्टी" कहानी की गनेशी और लालमन पति-पत्नी नहीं हैं, पर साथ-साथ रहने के लिए मजबूर हैं। गनेशी एक मुसीबत की मारी और है। दो-तीन पुरूषों ने उसे धोखा दिया। प्यार-मुहब्बत का नाटक करके बाद में खिसक गये। इन पुरूषों से इसे दो बच्चे भी हैं। इन बच्चों का पालन-पोषण करने के लिए वह किसी-न-किसी कोढ़ी का साथ गांठ लेती है और उसकी गाड़ी खींचकर भीख माँगती है। उस कोढ़ी की उसे सेवा-चाकरी भी करनी पड़ती है। लालमन ऐसा ही एक कोढ़ी है। वह खाने का बहुत चटोरा है। बार-बार दस्त लग जाती है फिर भी जलेबियाँ खाने की उसकी हवस मिटती नहीं है। गनेशी को बार-बार उसका गू-मूतर साफ करना पड़ता है। उसका जी घिनिया जाता है पर अपने बच्चों के खातिर उसे यह सब करना पड़ता है। लालमन अब बूढ़ा हो चला है और कभी भी लुढ़क सकता है। कहानी में एक स्थान पर गनेशी सोचती है -"सत्रह-अठारह वर्षों की फजीहतों से भरी ज़िन्दगी के बाद, अब थोड़ी-सी राहत मिली है। चार-पाँच सौ भी लालमन के लुढ़कने के पहले किसी तरह जमा हो जाते, जो एक बार फिर से कहीं पान-बीड़ी की गुमटी करती।"[१४]

(ग) भयंकर गरीबी और भुखमरी :---

मटियानी जी की कहानियों में भयंकर गरीबी और भुखमरी का

हृदयद्रावक चित्रण मिलता है। ''चील'' कहानी में रामखेलावन नामक बच्चे का चित्रण है। उसके पिता मर चुके हैं। माँ भी मरणशय्या पर पड़ी है। दो दिन से उसने कुछ खाया नहीं है। वह आश्रम वाले बाबा जी के भी दो-चार चक्कर काटता है। उसने दूसरे छोकरों से सुन रखा था कि आश्रमवाले बाबा जी छोकरों को अपने कमरे में बुलाकर ढेर सारी मिठाईयाँ देते हैं। परंतु बाबाजी भी उसे भगा देते हैं क्योंकि वह बहुत बदसूरत और दरिद्र दिखता है।[१५] निराश होकर वह लौट रहा था कि अचानक उसे ढोल-मजीरों की आवाज सुनाई पड़ती है। वह समझ जाता है कि कोई मुर्दा आ रहा है। अतः वह इस आशा में उधर दौड़ पड़ता है कि मुर्दे के ऊपर जो पैसे फेंके जाते हैं, उनमें से कोई सिक्का उसके हाथ में पड़ जाए। उसे एक दश पैसे का सिक्का मिलता भी है, पर तभी एक दूसरा बच्चा चिल्लाकर कहता है--''जा साले, ले जा। घर पर तेरी अम्मा मरी पड़ी है। साले, तू भी तो बिखेरेगा पैसे अपनी अम्मां की ल्हाश पर........।''[१६] यहाँ किसी को प्रश्न हो सकता है कि रामखेलावन कैसे अपनी माँ की अर्थी पर पैसे फेंक सकता है ? पर हमारे इस ''धर्मप्राण-समाज'' में जीते जी आदमी भूखों मर जाता है, पर मरने के बाद उसके संस्कार के लिए तो पैसे कहीं-कहीं से आ ही जाते हैं। प्रेमचंद की ''कफ़न'' कहानी में यही तो बताया है।

''एक कॉप चा : दो खारी बिस्किट'' की नसीमा बम्बई की फुटपाली जिन्दगी जी रही है। शरीर का सौदा करके वह किसी तरह अपने पेट की आग को बुझाती है। परन्तु इधर दो-तीन दिन से उसे कुछ खाने के लिए नहीं मिला है। जन्सू दादा उसे बिरयानी-कोफ्ता खिलाना चाहते हैं, पर उनके साथ वह जाना पसंद नहीं करती, क्योंकि उसकी माँ ने बताया था कि जन्सू दादा ही उसके बाप हैं। अतः वह रामन्ना के पास जाती है। परंतु रामन्ना के भी उन दिनों ''कड़की'' चल रही थी। उसके पास केवल एक ''चोली'' याने दो-अन्नी थी। नसीम कहती है कि पहले वह उससे प्यार कर ले और बाद में उस दुअन्नी से एक कॉप चा और दो खारी बिस्किट वे

दोनों खा लेंगे।[१७]

"रहमतुल्ला" कहानी का रहमतुल्ला भी एक अनाथ बच्चा है। उसके माँ-बाप मर चुके हैं। मसीहा मस्जिद के अजानी मुसीफुद्दौला उसे अपने पास ले आते हैं, पर वे भी खुदा के प्यारे हो जाते हैं। किसी तरह वह हुसैनमियाँ के हाथों पड़ता है। हुसैनमियाँ सोचते हैं कि एक मुफ्त का नौकर मिल गया है। उसे वे अपने यहाँ ले जाते हैं पर उनकी बेगम बहुत ही जालिम और बेदर्द औरत है। वह रहमतुल्ला को खाने के लिए तो कुछ देती नहीं है और ऊपर से अनाज पिसवाने बिठा देती है। रहमतुल्ला ने दो-तीन दिन से कुछ खाया नहीं था। उसकी अंतड़ियों में बल पड़ रहे थे। मारे भूख से जब रहा नहीं जाता, तब वह एक मुट्ठी चना अपने मुँह में भर लेता है कि आधे-पौने चने गले से निकलकर बिखर जाते हैं।[१८]

इस प्रकार की कई कहानियाँ है जहाँ भयंकर गरीबी और भुखमरी का चित्रण मटियानी जी ने किया है और उसका एक कारण यह भी है कि मटियानी जी स्वयं इसके भुक्तभोगी रहे हैं।

(घ) गुण्डों- बदमाशों- जेबकतरों- दादाओं- उठाईगिरों और जुआरियों का संसार : ---

मटियानी जी को बम्बई की अंधेरी आलम का अपरागत अनुभव रहा है। "बोरीवली से बोरी बन्दर तक", "कबूतरखाना" तथा "किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई" जैसे उपन्यासों में इस दुनिया का विस्तृत चित्रण मिलता है। परंतु उनकी अनेक कहानियों में भी इसका यथातथ्य चिंण उपलब्ध होता है। ऐसी कहानियों में "एक कॉप चा : दो खारी बिस्किट", "चिथड़े ", "गरीबुल्ला", "दैट माय फादर बालजी", "बिट्ठल", "प्यासा", " इब्बूमलंग", "इल्लेस्वामी", आदि को रेखांकित किया जा सकता है। "जिबूका" तथा "भविष्य" कहानी में क्रमशः जुआरियों और चोर-डकैतों का वर्णन है, किन्तु उनका परिवेश बम्बई का नहीं है।

''इल्लेस्वामी''' कहानी का इल्लेस्वामी बम्बई का एक नामचीन दादा है। चिंचपाकली , दादर, फारस रोड़, खेतवाड़ी जैसे क्षेत्रों में उसकी उस्तादी में कई लड़के काम करते हैं। वह बड़े लोगों की सोपारियाँ भी लेता है। उसकी बहन येनम्मा बेंगलोर के बैंकटेश्वर मंदिर के सामने भीख मांगती थी और उसी में ही उसकी मृत्यु हो गई। अनाथ इल्लेस्वामी बेंगलोर से बम्बई बिना टिकट के आ रहा था। पुलिस ने उसे पकड़कर बच्चों की जेल में भेज दिया। बच्चों की यह जेल धारवाड़ में है और मटियानी जी की अनेक कहानियों में इस जेल का जिक्र आता है। जेल क्या है, एक तरह से निर्दोष और मासूम बच्चों को अपराधी बनाने का मानो कारखाना है। निर्दोष और मासूम इल्लेस्वामी धारवाड़ जेल से गुण्डा बनकर निकलता है और अपनी बुण्डागर्दी बढ़ाते-बढ़ाते वह बम्बई का मशहूर दादा बन जाता है। इस कहानी में एक विधवा मराठी लड़की का किस्सा आता है। वह एक पारसी सेठ होरमसजी के यहाँ काम करती थी। एक दिन मौका पाकर सेठ उसकी इज्जत लेने का प्रयास करता है। वह लड़की सेठ के मुंह पर थूक कर चली जाती है। सेठ को बड़ा गुस्सा आता है वह इल्लेस्वामी को सोपारी देता है कि वह उस लड़की को उठवाकर उसके पास ले आवें। इल्लेस्वामी उस लड़की को उठा लाता है, पर उसे देखकर उसे अपनी बहन येनम्मा की याद आ जाती है और वह उसे अपनी बहन बना लेता है।[१९]

''इब्बूमलंग'' कहानी का नागप्पा भी बम्बई का एक नामचीन और मशहूर दादा है। आजकल की ''बम्बइया-भाषा'' में इनको ''भाई'' कहा जाता है। और ये भाई बड़े खतरनाक होते हैं। पहले चाकू और खंजर चला देते थे, अब पिस्तौल की गोली चला देते हैं। किसी भी व्यक्ति को मारने में उनको किसी प्रकार की हिचक नहीं होती है। इन्सान को मारना और मच्छर को मारना वे बराबर समझते हैं। नागप्पा भी ऐसा ही एक दादा है। कई गुण्डे और मवाली उसकी मातहत में काम करते हैं। दारू, मटका, जुआ, सोपारी, रंडीखाना चलाना आदि उसके धंधे हैं। कहानी-नायक इबादत हुसैन दारू और चरस के नशे में धुत होकर

गंदी-गोबरी अवस्था में पड़ा रहता है। नागप्पा और उसके साथियों का ध्यान इसके हुलिये पर जाता है और वे उसे ''इब्बू मस्ताना'' से ''इब्बूमलंग'' बनाने का प्लान बना लेते हैं। जब इब्बू नागप्पा को पूछता है कि वह उसे पीर-मलंग कैसे बनाएगा, जबकि उसमें उस प्रकार का कोई हुनर या इल्म नहीं है। इसके जवाब में नागप्पा कहता है --

''अबे मस्तान, तूने जो बेमिसाल हुलिया बना रखा है अपना और ज़बान पर आबेजमजम का पानी चढ़ा रखा है, इससे बड़ा हुनर और क्या होगा, बे ?.........देख, तेरा काम और कुछ करना नहीं। पहले हम उसे भरवाएंगे और जश्न मनवाएंगे, खैरात बटवाएंगे। फिर सट्टे के आंकड़े बांटने शुरू करेंगे। तेरा काम सिर्फ इतना रहेगा कि कोई अगर तुझसे आंकड़ा मांगे, तो जो मुंह से आए, बकते ही चले जाना और मां-भैन-जोरू की गालियां देते जाना। मौके-बेमौके एकदम मादरजात नंगा हो जाया करना और हाथ-पाँवों को अजीब ढंग से हिलाया करना। बाकी का काम हम खुद संभाल लेंगे।''[२०]

''प्यास'' कहानी में दारू, मटका, उठाईगीरी, पाकेटमारी, भीख तथा भीख के तरीकों का माहौल है। इस कहानी में भी एक-से-बढ़कर एक बदमाश और चोर-उचक्कों की बात आती है। पांडुरंग मामा ने तो भीख के व्यवसाय से एक मकान और एक कारखाना खड़ा कर दिया है। जो बच्चे मामा की ट्रेनिंग से बाहर निकलते हैं, वे बाद में चोर-उचक्के और जेबकतरे और पाकिटमार बनते हैं। कहानी-नायक शंकरिया पहले मामा के लिए भीख मांगता है। बाद में जेकब दादा के गिरोह के छोकरों के साथ दारू की बोतलें सप्लाय करने लगता है। वहाँ से तीन साल के लिए धारवाड़ की बच्चों की जेल में पहुँच जाता है। वहाँ उसकी मुलाकात यासीन नामक एक पाकिटमार से होती है। जेल से छूटने के बाद यासीन शंकरिया को कादिर उस्ताद से मिलवा देता है जो उसकों सींक का सौदा, लक्कड़ का सौदा और झटके के सौदे के तमाम गुर सिखाते हैं। सींक के सौदे में ऊंगलियों के माध्यम से पैसे या पाकिट खींच लेना होता है,

लक्कड़ के सौदे में ब्लेड़ से जेब काटनी होती है और झटके के सौदे में सोने की चेइन या पर्स इत्यादि मौका देखकर खींचकर भागने की बात होती है। [२१] एक स्थान पर कादिर उस्ताद शंकरिया को सिखाते हैं-- "बेटे, वफादारी से काम करेगा, तो तेरी ऊंगलियों में जादूई कबूतर बाँध दूँगा, जादूई कबूतर ! फिर जिसकी गिरह में सींक फंसाएगा, जादूई परिन्दे खजूरछाप नोटों की गड्डियाँ बाहर खींच लाएंगे।"[२२]

"चिथड़े" कहानी का गेंदी कोल्हापुर के पास के किसी गाँव का सीधा-सादा व्यक्ति है। उसके बचपन का दोस्त पांडु जो बम्बई रहता है, एक बार गाँव आता है और उसे सब्ज-बाग दिखाता है। पांडु छैल-छबीला हो गया है। वह "पांडु" से प्रीतम हो गया है। गेंदी उसकी बातों में आ जाता है और घर से अच्छी-खासी रकम लेकर बम्बई के लिए चल पड़ता है। बम्बई पहुँचने पर दादर स्टेशन पर जब उसकी आँख खुलती है तो टिकट-चेकर उससे टिकट मांग रहा था। पांडु का कहीं ठिकाना नहीं था। गेंदी की आँख लगने पर वह कहीं चंपत हो गया था। उसके रूपयों की पोटली भी उठा ले गया था। बिना टिकट सफर करने के जुर्म में एक दिन की जेल काटकर एक स्थान पर वह बैठा था, तो वहाँ उसे एक उठाईगीर मिल जाता है, जो उसके बिस्तर को लेकर गोल हो जाता है। अतः हार-थककर वह अपनी चाँदी की करधनी बेचकर किसी तरह घर वापस पहुँचता है।

"बिट्ठल", "एक कॉप चा : दो खारी बिस्किट", "जिसकी जरूरत नहीं थी" आदि कहानियों में भी ऐसे उठाइगीरों और जेबकतरों का प्रकारान्तर से उल्लेख मिलता है। "जिबूका" कहानी का जीवन सिंह मटौला प्रख्यात जुआरी है और जुए की कला का, विशेषतः तीन पत्ती का माना हुआ उस्ताद है। "लीक" कहानी के नायक प्रो. कुंडलनाथ का जुआरियों के परिवार से संबंध है। उनके बापदादे आदि सभी माने हुए शरीबी-जुआरी बताए गए है।

(च) अनाथ बच्चों का संसार : ---

मटियानी जी की अनेक कहानियों में हमें अनाथ बच्चों की व्यथा-कथा मिलती है। इसका एक कारण यह भी है कि मटियानी जी जब कुमाऊं से भागकर बम्बई आते हैं, तब एक लम्बे समय तक उनको अनाथों जैसी जिन्दगी बितानी पड़ी थी। मुजफ्फरनगर में महीनों तक उन्होंने एक घर में नौकरी की थी, जिस नौकरी में जूठे बर्तन घिसने, झाडू लगाने से लेकर, पेटीकोट-ब्लाउज धोने का काम भी उनको करना पड़ता था। अपने बम्बई जीव के संदर्भ में उन्होंने लिखा है --

"और एक दिन मैंने पाया, कि चारों ओर महानगरी बम्बई की विशाल अट्टालिकाएँ हैं और नीचे फुटपाथ है। फुटपाथ, जिनमें मैंने अब शरण लेनी है और मुझे यह स्वीकारते संकोच नहीं, कि बम्बई की फुटपाथों ने, उन फुटपाथों पर पलने-पनपने वाले कुलियों, मजदूरों, भिखमंगों, उचक्कों, उठाईगीरों और गुण्डों ने मुझे जो आत्मीयता दी, जो सहारा दिया और श्रम करते हुए जीने की जो दिशा, दृष्टि दी, वह साहित्यकारों के यहाँ उपलब्ध नहीं होती।"[२३]

इन दिनों में भूख की अदम्य आग को शांत करने के लिए वे जान-बूझकर पुलिस के हाथों पकड़े जाना पसंद करते थे, ताकि पन्द्रह-बीस दिनों के लिए "भत्ते" की व्यवस्था हो जाए। इन पुलिस चौकियों में ही इन्हें ज्ञात हुआ कि खून बेचकर भी रूपये कमाए जा सकते हैं। एक बोतल खून, दस रूपये में बिकता था।[२४]

इन सब अनुभवों के आधार पर उन्होंने जो कहानियाँ लिखी हैं, उनमें अनेक स्थानों पर अनाथ बच्चों का दयनीय अवस्था का चित्रण हमें मिलता है।

"एक कॉप चा : दो खारी बिस्किट", "दैट माय फादर बालजी", "बिट्ठल", "चील", "प्यास", "भय", "रहमतुल्ला", "इल्लेस्वामी" आदि कहानियों में हमें ऐसे कई अनाथ बच्चे मिलते हैं।

यहाँ एक तथ्य ध्यातव्य रहे कि यहाँ केवल उन कहानियों का जिक्र है जो हमारे आलोच्य-विषय के दायरे में हैं। उनकी अन्य कहानियों में भी अनाथ बच्चों का चित्रण हो सकता है।

उपर्युक्त कहानियों में "चली", "रहमतुल्ला" जैसी कहानियों के अतिरिक्त दूसरी कहानियों में बम्बई के फुटपाथों और झोंपड़पट्टियों का चित्रण है। "चील" में इलाहाबाद और "रमहतुल्ला" में अल्मोड़ा का परिवेश है। "एक कॉप चा : दो खारी बिस्किट" के रामन्ना और उसकी बहन, नसीम ये सब पात्र फुटपाथ पर ही पले-बढ़े हैं। अनाथों की तरह ही उनका बचपन बीता है। "बिट्ठल" भी फुटपाथ की ही पैदाइश है। बम्बई के हजारों लावारिसों की तरह बिट्ठल की जिन्दगी भी फुटपाथ से ही शुरू हुई थी। छः-सात साल की उम्र से उसने वेश्याओं के लिए ग्राहक जुटाने का काम शुरू किया था। बाद में रूस्तमजी सेठ के सिनेमा-हाल पर "बूम" लगाने के लिए उसे रखा जाता है। बूम मारते-मारते वह दर्शकों को यह भी बताता था कि "अन्दर तो और भी खुल्ला बताया है।"[२५] इस प्रकार पढ़ने-लिखने और खेलने की उम्र में यह अनाथ बच्चा तमाम मासूमियत को खो चुका था। अन्य कहानियों में भी जो अनाथ बच्चों की बात आयी है, उसकी चर्चा पूर्ववर्ती पृष्ठों में एकाधिक बार हो चुकी है।

(छ) नगरीय-वेश्याएँ : ---

जो वैभव- विलास के लिए काल-गर्ल का काम करती हैं, या अपनी विलासपूर्ति के लिए पुरूष-शरीरों का इस्तेमाल करती हैं, वे भी वेश्याएँ हैं; परंतु यहाँ जिन वेश्याओं का जिक्र हम कर रहे हैं, वे पेट का आग बुझाने के लिए, अपने भाई या बेटे के पेट को पालने के लिए शरीर का सौदा करती हैं, और उनकी गणना भी दलितों में ही की जानी चाहिए। इन वेश्याओं और भिखारिनों की कोई जाति नहीं होती है। उनकी विरादरी

हो ती है, वर्ग होता है, जिसे दलित ही कहा जा सकता है। मटियानी जी की अनेक कहानियों में ऐसी वेश्याओं का चित्रण मिलता है "एक कॉप चा : दो खारी बिस्किट", "चिथड़े", "गरीबुल्ला", "दैट माय फादर बालजी", "बिट्ठल", "प्यास", "इब्बू मलंग", "भय", "दो सुखों का एक सुख", "भंवरे की जात", "इल्लेस्वामी" जैसी कहानियों में हमें ऐसी वेश्याओं की दयनीय अवस्था के चित्र मिलते हैं।

"एक कॉप चा : दो खारी बिस्किट" की नसीम ऐसी ही एक वेश्या है। एक स्थान पर वह रामन्ना को कहती है -"हम और लोगों की जिन्दगी भी क्या बदनसीब ... मैं भी कैसी बेशरम हूँ? रोटी के लिए बोते भी देना और बोटियाँ भी ... थू है न ऐसी जिन्दगी पर? सोचती हूँ, मेरा भी कोई भाई होता ..."[२६]

नसीम जब भाई की बात करती है, तो रामन्ना को अपनी बहन करावा की स्मृति हो आती है। वह भी करावा का भाई था। पर क्या कर लिया उसने? करावा अपने तथा रामन्ना के लिए वेश्यावृत्ति करती थी। हरखू पाटीवाला रामन्ना से कहता है कि उसकी बहन करावा तो कइयों के साथ सो चुकी है, तब रामन्ना पागल-सा हो जाता है और अपनी बहन करावा को जली-कटी बातें सुनाता है-- "बेहया तेरे नाम पर सारा बोरीबन्दर थूक रहा है। ते ढोंढू हौलदार से? बनमाली वाचमैन पारसीबाबा से?"[२७] रामन्ना सोच रहा था कि उस के ऐसे व्यवहार से करावा रो पड़ेगी, उससे लिपट जाएगी। पर ऐसा नहीं होता। उल्टे वह उसके मुंह थूंकते हुए हिकारत के साथ कहती है -- "दुनिया वाले मुझ पर थूंकते होंगे, लेकिन मैं तुम्हारे मुंह पर थूंकती हूँ, कि तुम्हारे जैसा भैसे-हाथी सरीखा भाई होकर भी मुझे रोटियों के लिए तन का सौदा करना पड़ता है, मन का खून करना पड़ता है।"[२८] और ऐसा कहते हुए वह नागपुर एक्सप्रेस के आगे दौड़ पड़ती है और आत्महत्या कर लेती है। वह दुनियावालों की मलामत तो बरदाश्त कर सकती थी, पर अपने सगे भाई के सामने बेइज्जत नहीं हो सकती थी। उसकी हया उसे खुदकुशी करने पर मजबूर कर देती

है ।

नसीम ने दो दिन से कुछ खाया नहीं है । उसे मालूम है कि रामन्ना उसे प्यार करता है । अतः वह उसके पास जाती है । परंतु उन दिनों वह भी खाली था। उसके पास फकत एक दुअन्नी थी। नसीम कहती है कि कोई बात नहीं। पहले वे दोनों प्यार करेंगे । फिर उस दुअन्नी से "एक कॉप चा और दो खारी बिस्किट" खरीदेंगे और साथ मिलकर खायेंगे । जम्सू दादा नसीम को बिरयानी खिलाने की बात करते हैं, पर वह उनके साथ नहीं जाना चाहती, क्योंकि उसकी मां से उसे मालूम हुआ था कि जम्सूदादा ही उसके पिता है । इस प्रकार लेखक ने बताया है कि एक तरफ नसीम जैसी वेश्या है, जो पेट के खातिर कई लोगों के साथ सो चुकी है, रामन्ना से दुअन्नी भी बिना धंधे के नहीं लेती, और ऊपर से उसमें से उसे भी खिलाने की बात करती है; दूसरी तरफ जम्सू जैसे हेवान भी हैं जो पहले नसीम की माँ से रिश्ता रखता था और अब बेटी से भी उसी प्रकार का रिश्ता रखना चाहता है ।

"भय" कहानी के ननकू की औरत दारू और रंडी के धंधे में रह चुकी है । "इल्लेस्वामी"कहानी की आयशाबाई भी एक वेश्या है । जब स्वामी उसको पूछता है कि - "आयशाबाई, तुम हमकूं नफरत की निगाह से देखता है?" तब वह स्वामी से सच-सच कहती है - "नहीं स्वामी? तुमसे नफरत क्यों करूंगी? इन पांच वर्षों में जितना पैसा तुमसे पाया है, किसी और से नहीं। मगर पैसा और हविश एक चीज है, मुहब्बत दूसरी। बिलकुल दूसरी चीज, स्वामी।"[२१]

इस प्रकार "चिथड़े", "गरीबुल्ला", "दैट माय फादर बालजी", "बिट्ठल", "जिसकी जरूरत नहीं", "प्यास", "इब्बूमलंग" जैसी अनेक कहानियाँ हैं जिनमें वेश्याओं के जीवन के यथार्थ को उकेरा गया है ।

(ज) पुरूष-वेश्याएँ : ---

यह शब्द सुनने में थोड़ा विचित्र लग सकता है, पर हकीकत में ऐसी स्थिति होती है। जिस प्रकार अपनी लाचारी या विवशता में कोई स्त्री शरीर का सौदा करती है; ठीक उसी प्रकार कई बार कुछ पुरूष भी गरजमन्द औरतों की हविश पूरी करने के लिए अपने पुरूषत्व का सौदा करते हैं। इसे भी एक प्रकार की वेश्यागिरी ही कह सकते हैं। पाश्चात्य देशों में तो "मेल-प्रोस्टिट्युशन" जैसा शब्द प्रचलित ही है। शैलेश मटियानी की अनेक कहानियों में इस प्रकार के पुरूष या "छोकरों" की बातें आती हैं, जिनका काम अपनी मालकिनों की हविश को पूरा करना होता है।

"एक कॉप चा : दो खारी बिस्किट", "गरीबुल्ला", "फर्क बस इतना है", "बिट्ठल", "जिसकी जरूरत नहीं थी" आदि कहानियों में पुरूष-वेश्यागिरी का जिक्र मिलता है। "एक कॉप चाः दो खारी बिस्किट"कहानी के जम्सू दादा एक तरफ अपनी हविश पूरी करने के लिए वेश्याओं के पास जाते हैं, पर दूसरी तरफ अपने खर्चे-पानी के लिए बड़ी-बड़ी सेठानियों की हविश पूरी करने भी जाते हैं। "गरीबुल्ला" कहानी में लेखक वर्णन करता है - "मरीनड्राइव, चर्चगेट की तरक कैफे-परेड़ में भी सड़क-किनारे बेन्चें लगी हुई हैं, जहाँ शाम को ठण्डी हवा लेने वाले चक्कर काटते रहते हैं। ...(वहाँ) हवा से भी तेज फरफराने वाली लड़कियां और चक्करदार रोमान्स लड़ानेवाली विवाहित-प्रौढ़ाएँ अधिक आती है। लड़कियाँ ऐसे बूढ़ों को ढूंढती हैं, जो अपनी विशुद्ध वासना की तृप्ति के लिए उन्हें सिनेमा दिखा सकें, बड़े-बड़े होटलों में लंच खिला सकें। ...और प्रोढ़ाएँ ऐसे जवानों को ढूंढती हैं, जो जेब से कड़के, मगर जिस्म के तगड़े हों और चन्द रुपयों के लिए उनके साथ कहीं भी जा सकें।"[३०]

उपर्युक्त कथन में जहाँ प्रौढ़ाओं का जिक्र है, वहाँ पुरूष-वेश्यागिरी का ही संकेत है। "फर्क, बस इतना है" का सद्दू भी इस प्रवृत्ति का

संकेत देता है । यथा - ''इन कोठियों की चाकरी में सेठानियों की चूहेदानी से निकालो, तो सेठों के पिंजरे में और इन दोनों से फुर्सत मिले, तो बेबी लोगों के कबूतर खाने में ।''[31] तथा - ''और बंगलों की चाकरी में सबसे बड़ी मुसीबत मुहब्बत की है ।''[32]

''बिट्ठल'' कहानी का बिट्ठल रूस्तमजी सेठ के यहाँ चम्पी-मालिश करने के लिए रखा गया है । पर चम्पी-मालिश के अलावा उसे बहुत कुछ करना पड़ता है । उसी कहानी की रूस्तमा (सेठ की बेटी) बिट्ठल से कहती है - ''पिछले बरस भी पापाजी रत्नागिरी से एक रामा लेके आए थे । वह पापाजी, बड़ी बाई और मेरे को - तीनों को संभालता था ।''[33] इसी कहानी का गना पठान करसनदास जवेरी की बीबी सोमावती की आग बुझाता है । सोमावती कुछ-कुछ दिनों में रूक्माबाई के यहाँ गना पठान को मिलने के लिए आती थी । रूकमाबाई पुरूषों के लिए वेश्याओं का अड्डा तो चलाती ही है, बम्बई की मालेतुजार सेठानियों के लिए गना पठान जैसे पुरूषों का भी प्रबंध कराती है ।[34]

''जिसकी जरूरत नहीं थी'' कहानी का नायक शिशिरकान्त कुमाऊँ से भागकर आया हुआ किशोर है । बम्बई में वह नौकार की तलाश में मारा-मारा फिर रहा है । एक बार वह एक पारसी सेठ का ट्रंक उठाकर प्रिन्सेस स्ट्रीट के एक शानदार बंगले पर पहुँचता है । उसका बंगला शानदार था, पर खुद पारसी कुछ जर्जर-सा था । ''जैसे अतुल-धन-राशि के बीच भी वह किसी भारी अभाव के कारण परेशान हो ।''[35]

इस कहानी में जो वर्णन मिलता है, वह भी इस प्रवृत्ति की ओर इशारा करता है । यथा -

> ''पीला पर्दा उठा - ''ऐ , यहाँ आना ।
>
> ''जी''मैं थोड़ा आगे सरक गया ।
>
> ''तुम्हारा नाम ?''
>
> ''शिशिर''- मैंने यों ही कह दिया -शिशिरकान्तसिंह ।''
>
> उसने एक अजीब भाव से मेरी ओर देखा । उसकी आँखों में

कुछ ऐसा ही भाव था, जैसा भाव हमारे यहाँ हब्बन बूचड़ की आँखों में उस समय आता था, जब वह "हलाल" के लिए आई हुई बकरी के पुट्ठों पर हाथ फेरता था। ....

उसने कहा - "हमारे यहाँ नौकरी करेगा, खुश रहेगा।"

मैंने कहा - "हाँ"। ....

रात को पारसी बड़ी देर से लौटकर आया और चुपचाप अपने कमरे में जाकर सो गया। वह ... हाँ, उसका नाम था सुम्मी। मराठी क्रिश्चियन थी।

हाँ, तो वह जब सोने गई, तो मुझे साथ ले गई।...

कपड़ा उतारकर बोली - "इधर आओ। जरा हमेरी बोडी का गांठ खोल दो।"

मैं शरम से लौट आया। वह भागती हुई मेरे पीछे आयी - "कहाँ जा रहे हो?"

वह बोली - "नौकरी नहीं करनी है?"

मैं बोला - "जी, करनी है।"

उसने कहा, कि वह मुझे रईस की तरह रखेगी, बहुत सारा रुपया देगी - और भी बहुत कुछ।"[३६]

परंतु शिशिर झटका देकर बाहर चला जाता है और बरामदे में सो जाता है। सवेरे मेम साहब पारसी से कहती है - "इसे जाने को बोल दो जी?" पारसी उस बिल्डिंग के फाटक के बाहर निकालते हुए कहता है - "हमको तुम्हारा जरूरत नहीं।"[३७]

मटियानीजी के उपन्यास "कबूतर खाना" तथा "किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई" में भी इस प्रवृत्ति का विस्तृत चित्रण मिलता है।

(झ) दलितों में उभरती चेतना : ---

नवजागरण आंदोलन, ज्योतिबा फुले, डा.बाबा साहब आंबेडकर,

महात्मागांधी तथा स्वाधीनता-आंदोलन औ स्वाधीनता-प्राप्ति आदि के कारण इधर दलितो में भी एक नयी चेतना, अपनी अस्मिता की पहचान, स्वाभिमान के के भाव इत्यादि पनप रहे हैं। दलितों में भी कुछ लोग पढ़-लिखकर आगे बढ़ रहे हैं। उनमें एक नयी राजनीतिक चेतना भी उभर रही है। इन सबका चित्रण भी मटियानीजी की कहानियों में उपलब्ध होता है। इस दृष्टि से "सतजुगिया आदमी", "धुधुतिया त्यौहार", "नंगा", "लीक", "हत्यारे", "बर्फ की चट्टाने"आदि कहानियां महत्वपूर्ण कही जा सकती हैं।

"सतजुगिया आदमी" में कुमाऊँ प्रदेश की दलित जातियों की नयी पीढ़ी में जो परिवर्तन आ रहा है, उसे लक्षित किया जा सकता है। हरराम पुरानी पीढ़ी का है। उसका बेटा परराम नयी पीढ़ी का है। वह अपनी नवजवानों की टोली में नयी चेतना को भरने का काम कर रहा है। मन्नू भण्डारी कृत उपन्यास "महाभोज" में जो काम बिसू कर रहा है, लगभग उसी प्रकार का काम परराम कर रहा है। उसके सामने आदर्श है अल्मोड़े के रायबहादुर किसनराम का। किसनराम भी दलित जाति के हैं, परंतु पढ़-लिखकर ऊँचे ओहदे पर पहुँच गए हैं और अपनी जाति के लोगों के उत्थान और उत्कर्ष के काम में लगे हुए हैं। अतः सरकार ने उनको रायबहादुर का खिताब भी दिया है। किसी छोटी जाति के व्यक्ति को रायबहादुर का खिताब मिले, यह इसी युग में संभव हो सकता है, जिसे कलियुग कहकर पोंगा-पंडित किसम के लोग हाय-तोबा मचा रहे हैं। परराम अपनी जाति के युवकों में प्रचार कर रहा है कि जिन कामों से उनको नीच समझा जाता है उन कामों को छोड़ देना चाहिए। इसलिए उनके युवक-मंडल में तय होता है कि अब कोई भी डोम मरे हुए ढोर को खींचने नहीं जाएगा, नाहिं उसकी खाल उतारेगा, नहीं उसका शिकार (मांस) खाएगा। दूसरे मेहनत-मजदूरी के काम कर लेंगे पर आगे से ये काम नहीं करेंगे।

पुरोहित केशवानंद की भैंस मर गई है। उनके यहाँ से तीन बार

बुलावा आचुका है, परन्तु तीनों बार परराम ने साफ इन्कार कर दिया कि मरी भैंस को खींचने कोई नहीं जाएगा। न परराम जाता है, न किसी को जाने देता है। परराम के पिता हरराम पुराने विचारों के हैं। हरराम को अपने बेटे परराम का यह कृत्य "ब्रह्मद्रोह" के समान लगता है। उनको डर है कि कहीं पुरोहित केशवानंद महाराज नाराज हो गए तो उनके बेटे का सत्यानाश हो जाएगा। केशवानंद के पिता राघवानंदजी बड़े कर्मकाण्डी थे ओर कई मंत्र उन्होंने सिद्ध कर रखे थे। उनमें एक मंत्र "कालीनाग" का भी था। केशवानंद भी अपने पुरखों की लीक पर चल रहे थे और किशोर वय से ही पोथी-पत्रा वगैरह सब संभाल लिया था। हरराम यह भी जानता हे कि रिद्धि-सिद्धि और वशीकरण-मारण के जो मंत्र-तंत्र होते हैं,वे पिता से पूत को, गुरू से शिष्य को प्राप्त होते हैं। हरराम को यही डर खाए जा रहा है। वह लाख बेटे परराम को गाली देता रहाता है, पर उसका अहित नहीं देख सकता। वह कालीनाग के छोड़ने की बात करते हे। तब परराम कहता है - "बौज्यू, कालीनाग न तो पंडित राघवानंद की मुट्ठी में था, न केशव पंडित के आचमन में है। कालीनाग तो असल में तुम जैसे मूरख लोगों की आत्मा और बुद्धि से लिपटा हुआ और पूरे शिल्पकार खानदानों को (कुमाऊं प्रदेश में डोम-चमार आदि अब मिस्त्री, शिल्पकार आदि "सरनेम"रखने लग गए हैं।) डंसता ही चला जा रहा है। हम डोम लोगों की आत्मा और बुद्धि को एक जहर तो जन्म-जन्मांतरों से लगा हुआ-ऊँची जाति के लोग हमें कुत्तों से भी ज्यादा अछूत मानते आये। म्लेच्छ कहकर दुत्कारते आये। दूसरा कालीनाग तुम-जैसे हमारे पुरखों की दुबुद्धि का हमें लपेटता रहा। .... तुम लोगों का अंधा खून हम लोगों की नसों में भर गया। ....जैसे ही हम सिर उठाकर जीनेकी कोशिश करते हैं, वैसे ही यह दुर्बुद्धि का नाग डंसने लगता है। मेरे भैंसे की खाल नहीं खींचने, भैंस का शिकार नहीं खाने से अगर सत्यानाश होता है, तो राय बहादुर किसनराम का सत्यानाश क्यों नहीं हुआ ?"[३९]

तार्किकता के ये तेवर ही नयी चेतना की पहचान है। इससे यह भी प्रमाणित होता है कि जाति में यदि एक व्यक्ति भी ऊपर उठ जाता है, तो बाकी लोगों में काफी हिम्मत आ जाती है। वैसे कहानी में आगे यह बताया गया है कि हरराम अपने हमउम्र कमलराम को साथ लेकर पुरोहित केशवानंद महाराज के वहाँ जाता है। केशवानंद की धर्मपत्नी पद्मावती बौराण्ज्यू पहले तो बिगड़ती हैं, पर बाद में उनको "सतजुगिया आदमी" कहकर उनकी प्रशंसा करती है। पर भैंस को खींचने में हरराम की मृत्यु हो जाती है।

"सतजुगिया आदमी" का हरराम जहा पुराने विचारों का व्यक्ति है, वहाँ "धुधुतिया त्यौहार" का देवराम पुरानी पीढ़ी का होते हुए भी नयी चेतना से संपन्न है। कहानी में इधर दलित लोगों में जो परिवर्तन आ रहे हैं उसे रेखांकित किया गया है - "पहाड़ में शिल्पकारों के प्रति घृणा तो नहीं, मगर सवर्णों में शिल्पकारों को अपना चाकर और अछूत समझने की जो एक रूढ़ि चली आ रही थी, वह टूटी नहीं थी। मगर, इधर कुछ लीक बदल रही थी। यह स्वाधीनता संग्राम का दौर था और गांधीजी का अछूतोद्धार आंदोलन जोर पकड़ चुका था। सागर की लहरें पहाड़ तक भी थपेड़े मारने लगी थीं। अब जिलास्तर के हरिजन नेताओं के साथ-साथ कांग्रेसी होने के दबावों, या गांधीजी की प्रेरणा में, कुछ सवर्ण नेता भी हरिजनों को ऊँचा उठाने की बातें करने लगे थे। इसी वातावरण में शिल्पकारों ने भैंस का गोश्त खाना बन्द करना शुरू कर दिया था, बहुत-से तीन पाले की जनेऊ पहनने लगे थे और "सेवा मानिये"की जगह सवर्णों को भभ "जैहिन्द"कहकर अभिवादन करने लगे थे।"[४०]

थोकदार ठाकुर कल्याण सिंह जैसे लोगों को निम्न जाति में वह जो परिवर्तन आ रहा था, वह बिल्कुल पसंद नहीं था। एक स्थान पर कल्याणसिंह के ही शब्दों में लेखक ने कहलवाया है - "अरे! आजकल तो इन लोगों की नसें एकदम ऊपर चढ़ी हुई। सुराज क्या आया, इन लोगों के बाप का ही राज आ गया। अरे, ससुरो, जो चार मुट्ठी जमीन

जोतने-कमाने को दे रखी, उसे तो छीन ही लूंगा, साथ ही अपनी घर-गिरस्ती और खेती के कामकाजों में हाथ लगाने से भी फटकार दूंगा, तो ऐंठी-बेंठी बिसर जाओगे। तब जाना ससुरी अपनी हरिजन पार्टी कोंगरेस के पास !''[४१]

थोकदारनी भी उनके सूरों में सूर पुराती हैं - ''अरे, एक यह देवराम ही क्या, आजकल तो इसकी घरवाली जसुली की लटी भी पीठ पर नहीं अटकती। जब से देवराम ने तिपलिया रस्सी गले में लटका ली, तबसे इसकी जसुली के हाथ-पांव भी अलसा गये।''[४२]

देवराम में जो चेतना उभर रही है उसका सटीक वर्णन लेखक ने किया है - ''देवराम की आँखों में आजकाल एक और सपना तैरने लग गया था। अगर उसका बेटा चेतराम हाईस्कूल भी पास कर ले और कभी पटवारी-पेशकर बनकर इसी पट्टी में आ जाए, तो उसका सिर औरों से हाथ-भर ऊँचा हो जाएगा। आज जो ब्राह्मण-ठाकुर उसे डुमड़ा-डुमड़ा कहते हैं, कल वही नमस्कार करने लग जाएँगे। जब-जब उनकी गरज पड़ेगी, चेतनराम को ''पटवारी ज्यू, पेशकार ज्यू'' कहते फिरेंगे। देवराम की अवमानित आत्मा कचोटती और वह चाहता कि उसकी जात-बिरादरी के लोग भी इस चाकर परंपरा से मुक्ति पाएं। वह अक्सर अपने बिरादरों से - ''यारो, एक जानवर तो होते घास खाने वाले, मगर अन्न खानेवाले जानवर हमीं लोग ठहरे। अगर शिक्षा नहीं हुई, सिर ऊँचा कके चलने का अभिमान नहीं हुआ, और जात-बिरादरी को आगे बढ़ाने की कामना नहीं हुई, तो घास और अन्न में फर्क ही क्या हुआ ?''[४३]

कहानी का शीर्षक ''घुघुतिया त्यौहार'' इसलिए है कि कुमाऊं प्रदेश में एक त्यौहार होता है, जिसे ''घुघुतिया त्यौहार'' कहते हैं। उस दिन कौओं को खीर-पूड़ी खिलायी जाती है और उस एक दिन के लिए उनका महत्व बढ़ जाता है। यहाँ कहानी नायक देवराम ''घुघुतिया'' का कौआ बना हुआ है। थोकदार कल्याणसिंह की भावज पंचायत बैठने वाली है और उसमें देवराम भी एक पंच के रूप में। ठाकुर पंचायत बैठक के

पहले देवराम को कई बार बुलाते हैं पर देवराम जाता नहीं है। और दिन होता तो ठाकुर की एक हांक पर आधा खाना छोड़कर देवराम भागता। आखिर ठाकुर खुद उसे बुलाने जाते हैं। तब देवराम उनको कहता है - "मगर, इस समय तो मैं आपके साथ नहीं चल सकता। सरपंच पद्मादत ने मुझसे कह रखा है कि पंचायत के समय आदमी भेजकर बुला लेंगे। ... और जहाँ तक पक्ष लेने का सवाल हुआ, तो पंच का आसन धरमराज का आसन होता। वहाँ पर तो न्याय, निसाफ का ही पक्ष लेना पड़ता, इस धरमशास्तरी बात को आप हमसे ज्यादा जानने वाले हुए?"[४४]

"नंगा" कहानी में रेवती के जो तेवर हैं, वे भी विचारणीय हैं। यथा- "पंच महाराज लोगों, हंसों की पांत तो जरूर गू खा गई, मगर कौए की जात अपना धर्म नहीं छोड़ेगी। जिस दगाबाज ने थूक के चाट लिया, उसकी जमीन में पांव रखने से मर जाना बेहतर। ... होगा कहीं परमेश्वर, तो कभी-न-कभी मेरा इन्साफ वही करेगा। मैं तो अपनी संतान की हत्या खुद नहीं करूंगी। ... ठकुरानी नहीं, शिल्पकारनी हूँ, मेहनत-मजदूरी से गुजर करूंगी। बैल को बेच दूंगी। गैया को यही बांध लूंगी, मगर हूँ अगर मैं हरराम की घरवाली और इस नस्वा की महतारी... पी रखा है मैंने भी अगर अपनी महतारी का दूध- तो आज के दिन से इस गुमानी ठाकुर की जमीन और मकान में हगने-मूतने भी नहीं जाऊँगी।"[४५]

इस कहानी का रेवती का चचिया ससुर सगतराम, भले पुरानी पीढ़ी का है, परंतु उसकी चेतना नयी है। रेवती को ठाकुर गुमानी का गर्भ है। सगतराम हरराम का गर्भ है। सगतराम हरराम का चाचा है। कोई दूसरा होता तो रेवती को कुल्टा और न जाने क्या-क्या कहता। परंतु रेवती की लड़ाई में वह रेवती के पक्ष में रहता है।

"लीक" कहानी का कुंडलनाथ कनफड़वा नाथ जाति का है, जिसकी गणना पिछड़ी दलित-जातियों में होती है। कुंडलनाथ का परिवार शराबियों-जुआरियों का परिवार है। पर इसी परिवार का कुंडलनाथ पढ़-लिखकर, डबुल एम.ए करके, "कुंडलवा" से प्रोफेसर कुंडलनाथ हो

जाता है। डुंगरी गाँव के ठाकुर गोपालसिंह की पुत्री जानकी अल्मोड़ा पढ़ने जाती है ओर कुंडलनाथ को दिल दे बैठती है। गोपालसिंह को अपनी बेटी के आगे झुकना पड़ता है, पर फिर भी बिरादरी में बिल्कुल नाक न कट जाए इसलिए वे चाहते हैं कि बारात अल्मोड़ा से आए, उसमें खूब धूमधाम हो और कनफड़े लोग ज्यादा न हों, पढ़े-लिखे मास्टर-प्रोफेसर लोग ज्यादा हों। कुंडल ठाकुर की "पितर-लीक" वाली बात को मान लेता है, पर फिर अपनी भी एक शर्त रखता है, जिसमें ठाकुर चारों, खाने चित्त हो जाते हैं - "मगर जब बारात आपके यहाँ से बिदा होकर, मेरे घर पहुँच जायेगी, तब मैं भी अपनी पितर-लीक पर चलूंगा, क्योंकि हर आदमी के लिए अपने पितरों-पुरखों की लीक पर चलना एक गौरव पूर्ण स्थिति होती है। सो, मैं यह प्रोफेसरी और प्रतिष्ठा की जिन्दगी छोड़कर जुआरियों-शराबियों और चरित्रहीनों की मंडली में जाऊँगा, और अपने बाप-दादाओं की लीक पर चलते हुए, खूब जुआ खेलूंगा, खूब शराब पिऊँगा और खूब ...."[४६]

यहाँ लेखक ने आंतर-जातीय विवाह की समस्या को भी रखा है। हमारे सामाजिक संस्तरण में शादी-ब्याह अपनी जाति-बिरादरी में होते है। उसे "रोटी-बेटी" व्यवहार कहते हैं। कहीं-कहीं ऐसा भी होता है कि "रोटी" व्यवहार नहीं होता। "धरती धन न अपना" (जगदीशचन्द्र) उपन्यास में काली और ज्ञानो दोनों दलित जाति के हैं, परंतु उनमें "बेटी" व्यवहार नहीं होने से उनके विवाह में अड़चन आती है। इस प्रकार शादियां प्रायः अपनी जाति-बिरादरी में ही होती हैं, तथापि कभी-कभी ऐसे क़िस्से भी सुनाई पड़ते हैं, जिनमें कन्या तो निम्न जाति की हो और वर उच्च जाति का हो। ऐसे विवाह को समाजशास्त्र की भाषा में Hypergamy कहते हैं। यद्यपि समाज वाले इसे आदर्श स्थिति तो नहीं मानते, फिर भी इसे एक बार चला लेते हैं। परंतु यहाँ जो विवाह है, वह दूसरे प्रकार का है। यहाँ कन्या तो उच्च-वर्ण की है और वर निम्न-वर्ण का है। ऐसे विवाह को Hypo कहते हैं। पहले तो ऐसा कभी होता ही

नहीं था, परंतु अब नवजागरण के पश्चात जो नये समीकरण आए हैं उनमें कहीं-कहीं ऐसा पाया जाता है। यदि निम्न जाति का पुरूष पढ़-लिखकर ऊँचे स्थान पर पहुँच जाता है, तो जैसा कि इस कहानी में हुआ है, उच्च गर्ण की लड़की उसे पसंद करने लगती है, चाहने लगती है।

यहाँ एक मुद्दा गौरतलब है कि कुंडलनाथ अपने होनेवाले ससुर ठाकुर गोपालसिंह के साथ शैबदारी से बात कर सकता है, क्योंकि उसने उच्च-शिक्षा प्राप्त की है। कहने का अभिप्राय यह कि जब तक निम्न वर्ग-वर्ण के लोग शिक्षित और संगठित नहीं होंगे वे जातिगत संस्तरण में नीचे ही रह जाएँगे। मटियानीजी के उपन्यास "नागवल्लरी" में भी इस प्रकार के विवाह को संपन्न करवाया गया है। वहाँ भोगांव गाँव के कृष्णा मास्टर हाईस्कूल के अध्यापक है और इलाहाबाद युनिवर्सिटी से पढ़कर आए हैं। ठकुरानी गायत्रीदेवी भी किसी स्कूल में अध्यापिका थी और कृष्णा मास्टर के तेजस्वी क्यक्तित्व से प्रभावित होकर वह उनसे विवाह कर लेती है। यह भी नयी चेतना का प्रभाव है।

उपर्युक्त कहानियों के अतिरिक्त "हत्यारे", "बर्फ की चट्टानें" जैसी कहानियों में भी यह नयी चेतना के तेवर मिलते हैं। "हत्यारे" कहानी के शिवचरण केवट और रामचरण केवट राजनेताओं की बात में आकर मारे जाते हैं, यह एक अलग बात है, पर उनमें एक नयी चेतना आयी है, इसे नकारा नहीं जा सकता है। इन लोगों ने "केवटपुरा हरिजन समाज" की स्थापना की है। रामचरण तो बिल्डर भी हो गए हैं और लायसन्सवाली बन्दूक भी रखने लगे हैं। "सतजुगिया आदमी" के परराम की तरह शिवचरण केवट भी अपने समाज के युवकों का नेता है। वह एक स्थान पर कहता है -"आप बुजुर्ग लोग बुरा न मानें, तो अपनी जाति-बिरादरी के लोगों के इस पिछड़ेपन पर थोड़ी-सी रोशनी ढालने की कोशिश करूं। दर असल पोलीटिकल कैरियर में सेन्स आफ ह्युमेनिटी की खासियत बहुत बड़ी होती है।"[४७] यहाँ गौरतलब बात केवल यह है कि जो लोग पहले "पाय लागन" और "सेवा मानिये" से आगे कुछ बोल नहीं पाते थे,

उनमें कम-से-कम यह हिम्मत तो आयी है।

"बर्फ की चट्टाने" का नायक "मैं" फौज में नौकरी करता है। वह पिछड़ी जाति का है। छुट्टियों में वह घर आता है और अपनी माँ, पत्नी, छोटे बच्चे तथा विधवा बहन के लिए कपड़े खरीदने शहर जाता है। यहाँ "वीर जवान हिन्दू होटल" का मालिक रतन ठाकुर उसे देख लेता है। रतन ठाकुर से यह बरदाश्त नहीं होता है कि कल तक जो हमारी उतरन पहनते थे, आज नये कपड़े खरीदने की हैसियत रखने लगे हैं। उसके भीतर की जलगन उसकी निम्न लिखित भड़ास के रूप में फूट निकलती है - "अरे, यारो ! तमाम दुनिया भर के भिखमंगे और चिलमनंगे तो फौज में ही भर्ती होते हैं। कोई गिरवी पड़ी हुई पुश्तैनी जायदाद छुड़ाने के लोभ में भर्ती होता है, तो कोई अपने घर की अधनंगी औरतों और बच्चों को ढंकने या उनके पेट की चिन्ता बुझाने के लिए। ऐसे घर-घाट के चिलमनंगों का सारा दिमाग तो अपने बीबी-बच्चों की रोटी-लत्ती में लगा रहता है, लड़ने में कहां से लगे? लड़े तो वह मर्द मराठा, जिसे दमड़ी छोड़, अपनी चमड़ी भी प्यारी न हो। पैसे के पीछे मरने वालों की सारी रूस्तमी तो ऐन मौके पर चई बोल जाती है।"[४८]

रतन ठाकुर उपर्युक्त बात कथानायक को सुनाने के लिए ही करता है। वस्तुतः यह उसके मन की भड़ास ही है। "धुधुतिया त्यौहार" के थोकदार ठाकुर कल्याणसिंह को जिस प्रकार यहाँ रतन ठाकुर को भी यह अच्छा नहीं लग रहा है कि छोटी जाति के ये लोग फौज या सरकारी नौकरियों को पाकर आत्मनिर्भर हो जाएँ।

इसका खुलासा भी कहानी के अन्तर्गत ही दिया हुआ है - "मुझे ऐसी तकलीफ हुई थी, जैसे रतन ठाकुर मेरे अन्दर हाथ डालकर मेरे कलेजे को चीर रहा है। मैं जानता था, दो साल तक दस रुपये महीने पर उसके होटल की नौकरी करने के बाद, उससे लड़-झगड़-कर मैं फौज में भर्ती हो गया था।"[४९]

रतन ठाकुर जो ऐसी बातें करता है उससे इतना तो प्रमाणित हो रहा है

कि इन छोटी जातियों में भी अब चेतना आयी है; और पढ़-लिखकर वे अब दूसरे काम, दूसरी नौकरियां, करने लगे हैं और अपने पुश्तैनी कामों और गुलामी की परंपरा को त्याग रहे हैं।

(ट) दलितों में भय और आतंक : ---

जिस प्रकार प्रेमचंद की ''सवा सेर गेहूँ'' या ''सद्‌गति'' जैसी कहानियों में हम देखते हैं कि शंकर और दुखिया में ब्राह्मण-पुरोहितों के प्रति भय और आतंक के भाव मिलते है। शंकर सोचता है कि ब्राह्मण का कर्ज तो चुकाना ही पड़ता है। किसी दूसरे का पैसा एब बार मार सकते हैं, दबा सकते हैं, पर ब्राह्मण का नहीं। ''सवा सेर गेहूँ'' का शंकर एक स्थान पर कहता हैं - ''एक तो ऋण, वह भी ब्राह्मण का, बही में नाम रह गया तो सीधे नरक में जाऊँगा, इस ख्याल ही से उसे रोमांच हो गया।'' [५०] उसी प्रकार ''सद्‌गति'' का दुखिय भी पंडितजी से आंतकित है। सवेरे से उसने कुछ खाया नहीं था। पंडितजी के यहाँ लड़की की सगाई की साइत निकलवाने गया था और पंडितजी ने कामों में लगा दिया। उनमें लकड़ी की एक गांठ को फाड़ने का काम भी था। कई लोग उस पर हाथ आजमा चुके थे। गोंड़ जो दुखिया से ज्यादा ताकतवर है वह भी उसे फाड़ नहीं सका था। दुखिया बेचारा उसी गांठ से जूझ रहा था। ''पेट पीठ में धंसा जा रहा था। आज सवेरे से जलपान तक नहीं किया था। अवकाश ही न मिला। उठना भी पहाड़ मालूम होता था। जी डूबा जा रहा था, पर दिल को समझाकर उठा। पंडित हैं, कहीं साइत ठीक न विचारें, तो फिर सत्यानाश ही हो जाय। तभी तो संसार में इतना मान हैं। साइत ही का तो सब खेल है, जिसे चाहें बिगाड़ दें।''[५१] फिर इसी कहानी में पंडितजी दुखिया को कहते भी तो हैं - ''जोर से बोले- अरे दुखिया तू सो रहा है? लकड़ी तो अभी ज्यों की त्यों पड़ी हुई है। इतनी देर तक तू करता क्या रहा? मुट्ठी भर भूसा ढोने में संझा कर दी। उस पर सो रहा

है। उठा ले कुल्हाड़ी और लकड़ी फाड़ डाल। तुझसे जरा-सी लकड़ी नहीं फटती। फिर साइत भी वैसी ही निकलेगी, मुझे दोष मत देना।''[५२]

उपर्युक्त दोनों उदाहरणों में हम देख सकते हैं कि शंकर और दुखिया दोनों ब्राह्मण-देवता के भय से आतंकित हैं, और मन न होते हुए भी, उनके कहे अनुसार चलने को विवश है।

मटियानीजी की कहानियों में ''सतजुगिया आदमी'' ऐसी कहानी है जिसमें हमें यह भय और आतंकवाली स्थिति मिलती है। प्रस्तुत कहानी हरराम पुरोहित केशवानंद की मंत्र-तंत्र शक्ति से बहुत ही डरा हुआ और आतंकित है। हरराम के पुत्र परराम ने सब शिल्पकारों को समझा दिया है क अब कोई भी शिल्पकार न मरे हुए मवेशियों को खींचने जाएगा, न उनका शिकार खाएगा या न ऐसा कोई काम करें जिससे उनको अछूत समझा जाता है। अतः पुरोहित केशवानंदजी की भैंस जब मर जाती है, तब उसे उठाने कोई जाता नहीं है। परराम न जाता है, न किसी को जाने देता है। तब उसका बाप हरराम क्रोधित होकर कहता है - ''खुला ब्रह्मद्रोह है। यह साले तू नहीं, तो क्या यह सत्तर साल का बूढ़ा तेरा बाप खींचेगा दस मन की भैंस?''[५३]

हरराम पंडित केशवानंद से कितना डरा हुआ और आतंकित है उसका वर्णन भी लेखक ने किया है- ''विक्षोभ के मारे हरराम की आत्मा कांप रही है। कहीं केशवानंदजी ने कुपित होकर श्राप दे दिया, तो शायद उसके पूरे कुल-वंश की ही भीत, अरअरा जायेगी। उनके पिता पुरोहित राधवानंदजी की शक्ति हरराम अपनी आँखों से देखता आया। कैसे-कैसे विषैले सांपों, भूतप्रेतों को, मंत्रों से ही बांध देते थे। फनफनाकर डंसने को आता हुआ विषधर सांप उनके ''ओम्-ओम्'' कहने मात्र से अपनी ही ठौर थिरा जाता था और ऐसे नाचने लगता, जैसे कोई संपेरा महुवर बजा-बजाकर उसें वंश में कर रहा हो- ''ओम्-विष्णु-र्विष्णु-र्विष्णु।''[५४]

पुरोहित राधवानंद की सिद्धि के कई किस्से हरराम को यद है। इन किस्सों के साथ एक भय और आतंक का भाव भी जुड़ा है कि पंडितजी के

साथ बिगाड़कर कोई चैन से रह नहीं सकता। एक बार राधवानंदजी के एक यजमान गुसांई किसनसिंह को खेत जोतने में सांप डंस लेता है। उस संदर्भ में हरराम बताता है - ''अरे, महाराज ! पंडित राधवानंदजी तो साक्षात् रिखी-मुनि-बरमर्सि हैं। किशनसींग गुसाईं ने उनसे ही छल-कपट किया। पहले अपने बाप बिरमसिंग की गति-किरिया करने समय तो दुधैले थनोंवाली गैया दान में देने का वचन दिया। ... मगर तेखें दिन पीपल छूकर सूतक बहा लेने पर, जनम-बैल गैया चिपटा दी।[५५] हुआ कि नहीं बर्मघात? ... जहाँ तक मेर बर्म बोलता है, पंडितराज राधवानंदजी ने कालीनाग, बासुकी नाग सिद्ध कर रखे। लगा दिया होगा, कालीनाग को मंतर कर। ...और सबसे बड़ा चमत्कार तो यह देखा, यारो, कि वह जनमबैल गाय पंडितजी की गोठ में जाते ही अगले बरस वत्बाल पर आ गयी और यारो, जो सेर-सेर भर दूध फूटा उसके थनों से।''[५६]

हरराम का कलेजा रह-रहकर कांप जाता है। वह सोचता है कि कहीं केशवानंदजी महाराज कुपित हो गये और उन्होंने कालीनाग मंतर कर भेज दिया तो? बड़ा बेटा बेदराम तो चला ही गया। एक जो अंत समय में देवगढ़ मसान में बारात ले जाने का सहारा रह गया है, उसका अनिष्ट हो जाये तो? ... हरराम को याद आता है कि स्वर्गीय पुरोहित राघवानंदजी महाराज कहा करते थे, कि जब मनुष्य के विनाश का समय आता है, सबसे पहले उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है।[५७] और हरराम डर रहा है कि परराम की भी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। ''हरराम यह भी जानता है कि रिद्धि-सिद्धि और वशीकराण-मारण के जो मंत्र-तंत्र होते हैं, वे पिता से पूत को,गुरू से शिष्य को प्राप्त होते हैं।''[५८]

हरराम केशवानंदजी महाराज से इतना डरा हुआ है कि कहीं उनके कोप से परराम का अनिष्ट न हो जाए इस डर से अपने हम उम्र कमलराम को लेकर पंडितजी के यहाँ पहुँचता है। हरराम को देखकर बौराणीज्यू कहती हैं - ''ले जायगी, हे हरराम, तुम घमंडी लोगों को तो हम ब्राह्मणों और गोमाता की हाय-हाय एकदम जड़ से धो-पोंछकर उठा ले

जायेगी।''[५९]

हरराम घबड़ा जाता है और दोनों हाथ जोड़कर बौराणीज्यू से कहता है - ''बौराणीज्यू, ''छिमा बड़न को धरम है, नीच धरम अभिमान। तब तक दयान छोड़िये, जब लग घट में प्राण।'' कह रखा है। आप तो गुसांयनी, हम कमजोरों की माता के ठौर पर हैं। नादानों से भूल-चूक हो जाती है। आकाश के बादलों से कुपित हो जाये, बौराणज्यू, तो धरती की धूल कहां जायेगी? ... मेरा परराम तो मूरख। शहर जाकर बिगड़ गया नालायक छोरा। ... धीरे-धीरे समझ जायेगा। गुसांयनी, पुरोहित गुसांई का कोप शांत करा देना, भाईं...भैंस उठाने को मैं और कमलराम आ गये। एक-दो रस्सियां दे दो।''[६०]

और इस प्रकार दोनों बेटे बहुत जोर लगाते हैं, पर उनका शरीर जवाब दे देता है, और हरराम तो इस प्रयत्न में मर ही जाता है। ''सद्गति'' का दुखिया पंडितजी की लकड़ी की गांठ फाड़ने में दम तोड़ देता है और हरराम भैंस को उठाने में अपने प्राण दे देता है। दोनों कहानियों में स्थितियां कुछ भिन्न हैं, परंतु दोनों में जो सामान्य सूत्र है, वह है भय और आतंक।

(ठ) जीवटवाली जूझारू नारियां : ---

मटियानीजी की दलित-जीवन पर आधारित कहानियों में कुछ ऐसे नारी-चरित्र मिलते हैं, जिनका जीवट और जूझारूपन श्लाघनीय कहा जा सकता है। ऐसे नारी पात्रों में ''नंगा'' कहानी की रेवती, ''पत्थर''की गफूरन, ''चील'' की ऋतनारायणी, ''प्यास''की कृष्णाबाई, ''इब्बूमलंग'' की शकुन्तलाबाई, ''मिट्टी''की गनेशी, ''महाभोज'' की शिवरत्ती, ''अहिंसा''की बिन्दा, ''भंवरे की जात'' की कुंतुली मिरासिन, ''सावित्री'' की सावित्री मिरासिन, ''कपिला'' की कपिला घोड़यानी आदि की परिगणना कर सकते हैं।

''नंगा'' कहानी की रेवती का पति मर जाता है। वह ठाकुर गुमानी का हलवाहा था। गुमनी की दृष्टि शुरू से ही रेवती पर थी। हरिराम की मौत के बाद भी रेवती उसी मकान में रहती है, जिसे ठाकुर ने उन लोगों के लिए बनाया था। शायद ठाकुर को इस बात का अंदाजा पहले से था कि हरिराम ज्यादा जीवित नहीं रहेगा। अतः उसने पहले से ही शिल्पकारों की बस्ती से अलग अपनी जमीन मर हरिराम-रेवती का छाना बना दिया था। हरिराम की मृत्यु के बाद रेवती तो अपने पुश्तैनी मकान में रहने जा रही थी, पर गुमानी ठाकुर ने ही उसे रोक लिया था। रेवती ने भी ठाकुर को एक तरह से अपने आदमी के रूप में स्वीकार कर लिया था और इस लिए ठाकुर से उसे गर्भ रहता है। पहले तो ठाकुर गर्भ गिराने के लिए बहुत प्रयत्न करता है, परंतु जब गर्भ नहीं गिरता है और महीने अधिक चढ़ जाते हैं, तब यह तय होता हे कि रेवती बच्चे को जन्म देगी, पर उसके बाद कोशी में उसे बहा देगी। किन्तु बच्चे को जन्म देने के बाद रेवती के भीतर की महतारी जाग उठती है और वह बच्चे को पालने का निर्णय कर लेती है। उस दिन से ठाकुर और ठकुरानी दोनों उसके विरोधी हो जाते हैं। रेवती अपने बेटे के लिए, उसके पालन-पोषण और खर्चे-पानी के लिए पंचायत बिठाती है। परंतु पंचायत में तो सब गुमानी ठाकुर के हजुरिये बैठे हुए थे। गुमानी ठाकुर को कुछ कहने की अपेक्षा, या उसे इन्साफ दिलाने के बदले, उल्टे वे उसे मुआफ़ी मांगने के लिए कहते हैं, तब पंचायत को फटकारते हुए वह कहती है कि मेहनत-मजदूरी करके वह अपने बेटे नरराम को पाल लेगी और है यदि वह हरिराम की घरवाली और नवजात शिशु नरराम की महतारी तो वह गुमानी ठाकुर की जमीन पर हगने-मूतने भी नहीं जाएगी, जिसने थूंककर चाट लिया है।[६१]

''पत्थर'' कहानी की गफूरन भी एक जूझारू औरत है। वह एक नेकदिल और वफादार औरत है। गफूरन का शौहर रमजानी एक कामचोर, निखट्टू और हरामखोर आदमी है। लेकिन गफूरन मेहनत-मजदूरी करके न केवल उसे खिलाती-पिलाती है बल्कि उसके सारे शौक भी पूरे करती है।

पान-सिगरेट, शराब और मटन-बिरयानी सब चाहिए रमजानी को और गफूरन ये सब उसे देती थी। बस उसकी एक ही तमन्ना थी - "या अल्ला रसूल, उन्हें राजी-खुशी रखना।"[६२]

"चील" कहानी की सतनारायणी भी ऐसी ही एक औरत है। उसका पति मर जाता है, पर वह हिम्मत नहीं हारती। लोगों के यहाँ झाड़ू-बर्तन, पोंछा, कपड़ा सब करती है, पर अपने बेटे खिलावन को बाप की कमी महसूस नहीं होने देती। "प्यास" कहानी की कृष्णाबाई भी एक मुसीबतों की मारी औरत है। पहले दारू बेचने का काम करती थी। उसका पति रेल दुर्घटना में मारा गया था। पति की मौत के बाद जैकब से उसका रिश्ता होता है। उससे एक गोरा-चिट्टा बच्चा भी उसे होता है, पर वह बचता नहीं है। बच्चे के मरने के बाद कृष्णाबाई जेकब से अलग हो जाती है, क्योंकि उसे पता चलता है कि जेकब ने उस बच्चे को जतन से दफनाने के बदले, कहीं जंगल में फिंकवा दिया था। उसके बाद वह बम्बई में भीख मांगकर अपना गुजारा करती थी। पर बच्चेवाली भिखारिनों की तुलना में उसे कम भीख मिलती थी, अतः उसने पंडुरंग मामा को बोलकर रखा था कि कोई बच्चा मिले तो सबसे पहले उससे बात करे। मामा शंकरिया को अनाथाश्रम से पचास रुपये नकद और मामा का रिश्ता देकर लाते हैं और धंधा करने के लिए वह बच्चा कृष्णाबाई को एक रुपया रोज के हिसाब से दे देता है। यद्यपि कृष्णाबाई भिखारिन है, शंकरिया को भीख के लिए ही लायी है, तथापि उसमें एक महतारी का दिल है। शंकरिया जब चार साल का था, तब उसे बचाने के लिए कृष्णाबाई खुद लोकल ट्रेन से कट गई थी।[६३]

"इब्बूमलंग" कहानी शकुन्तलाबाई का पति माधोराव लोकल ट्रेन से कटकर मर गया था। पर शकुन्तलाबाई एक मर्द औरत है। घर-घर बर्तन-भांडे करके वह अपने बच्चों का पेट पालती है। सुलतानी भंगन से जब उसे मालूम होता हे कि इब्बू मलंग से उसे आंकड़ा मिला था, तो वह भी अपने बच्चों का भविष्य बनाने के लिए इब्बू मलंग के पास जाती है।

इब्बूमलंग अपनी लुंगी उठा लेता है , अतः शकुन्तला अपनी कुल जमा पूंजी तेबीस में से बीस रुपये ''इक्के-पे-दुग्गी''और ''दुग्गी-पे-इक्के'' के ''डबल के आंकड़े'' पर लगा देती है । पर वह आंकड़ा नहीं आता । शकुन्तलाबाई की सारी कमाई उसमें डूब जाती है, तब उसका पुण्य-प्रकोप जाग उठता है और जिस इब्बूमलंग पर पूरी बम्बई मरती थी, उसे बुरी तरह से वह फटकारती है । तब नागप्पा दादा का डर भी उसे नहीं लगता । वह उसे माँ-बहन की गालियाँ सुनाती है ।[६४]

''मिट्टी'' कहानी की गनेशी भी एक जूझारू औरत है । दो-तीन पुरूष उसे झांसा देकर चले जाते हैं । उसमें उसे दो बच्चे भी होते हैं । अपने बच्चों के खातिर वह भीख मांगती है । भीख मांगने के लिए वह लंगड़े-लूले-कौढ़ी भिखारियों की तलाश में रहती है । उनसे सांठ-गांठ करके वह भीख मांगती है । इधर वह लालमन नामक एक कोढ़ी की औरत बनकर उसकी गाड़ी ढो रही है । लालमन खाने का बहुत लालची है । रात-दिन जलेबियां खाता रहता है । उसके कारण उसे जब-तब दस्त हो जाते हैं । वह बहुत गंधियाता है, पर गनेशी अपने बच्चों के खातिर सबकुछ करती है । उसका गू-मूतर सबकुछ साफ करती है । वह सोचती है कि लालमन के लुढ़कने के पहले यदि वह चार-पांच सौ की रकम जोड़ लेती है, तो फिर कहीं पान-बीड़ी की गुमटी लगा सकती है । अपने दोनों बेटों को लेकर वह तरह-तरह के सपने बुनती रहती है ।

''महाभोज'' कहानी की शिवरत्ती भी एक मर्द औरत है । लम्बी बिमारी के कारण जब उसके पति की नौकरी छूट जाती है, तब मेहनत-मजदूरी करके वह सबका पालन-पोषण करती है । उसका ससुर बीमार है । उसके दवा-दारू का खर्चा भी उठाती है । शिवरत्ती के चार बच्चे हैं । पांचवां आनेवाला हे । उसके पति चेतराम को शरीर-सुख की इच्छा होती है, तब शिवरत्ती उसे डांट देती है - ''मोती के बापू , दम तोड़ते बाप की नाक के नीचे यह बेहयाई ठीक नहीं । आन-औलाद पर बुरा असर पड़ता है ।''[६५] शिवरत्ती के दिल का बड़प्पन तो वहाँ दिखता है जब वह चेतराम

को मीरगंज की सलीमा के पास जाने के लिए तीन रुपये देती है। चेतराम कहता है कि उसका जी बड़ा मचल रहा है, अगर वह कुछ पैसे देवें तो वह मीरगंज हो आवें। इलाहाबाद में मीरगंज वेश्याओं का विस्तार है।[६६] चेतराम का बाप जब मर जाता है, तब वह हिम्मत हार जाता है और कहता है कि गुड़ की डली देकर मिट्टी को उठवा लेंगे। तब शिवरत्ती कहती है- ''मोती के बापू, बाप के मरने का रोना सभी मरदों को शोभा देता होगा, तुम्हारा यह जोरू के आगे का रोना मुझसे बर्दाश्त न होगा। अरे बेवकूफ, मैं किसी राह चलते की बेसवा हूँ, या तुम्हारी घरवाली? जिस बहुरिया से अपनी घर-गिरस्ती ही न सधी, उसका तो मीरगंज में जा बैठना ही भला।''[६७] औ शिवरत्ती चेतराम के बाप का कारज अपनी चांदी की करधनी बेचकर निबटाती है। ''अहिंसा'' कहानी की बिन्दा भी शिवरत्ती जैसी ही जूझारू औरत है।

''भंवरे की जात'' की कुंतुली और ''सावित्री'' की सावित्री दोनों मिरासिनें हैं, परंतु दोनों के संस्कार भिन्न है। रामसिंह हवालदार उसका प्रेमी है। परंतु वह जब रामसिंह की पत्नी रूकमी से मिलती है, तो उसका दिल पसीज जाता है और वह कहती है कि वह तो नाच-गाके भी अपनी जिन्दगी पार कर लेगी, लेकिन वह (रूकमी) कब तक मायके में पड़ी रहेगी। इसलिए वह रामसिंह पर से अपना दावा उठा लेती है। अपने स्वार्थ से वह ऊपर उठ आती है। सावित्री की माँ कलावती उसे सिखाती हे कि अब कि बार ठाकुर मेले में आवे तो वह उससे ज्यादा-से-ज्यादा पैसे ऐंठ लेवे, परंतु सावित्री पर उसका कोई असर नहीं होता। ठाकुर की पत्नी का देहान्त हो चुका है, और उससे उसे एक लड़का भी है। वह लड़का ठाकुर की ससुराल वाले रख रहे हैं। सावित्री फेंसला कर लेती है कि वह उस अनाथ लड़के को, बिना माँ के लड़के को, माँ का लाड़-प्यार देगी।

''कपिला'' कहानी की कपिला भी एक जीवटवाली औरत है। उसका पति धरमसिंह हलद्वानी-अल्मोड़ा रोड पर घोड़ों पर सामान लादकर उसे

असामियों तक पहुँचाने का काम किया करता था। लोग इसलिए उसे "धरमसिंह घोड़िया" कहते थे। पर एक दिन धरमसिंह घोड़िया को शेर खा जाता है। कपिला छोटी उम्र में विधवा हो जाती है। चाहती तो दूसरा ब्याह रचा लेती। वह जवान और सुंदर भी है। पर सास-ससुर थे, छोटे-छोटे देवर थे। अतः वह लाज-शरम छोड़कर अपने पति का व्यवसाय अपना लेती है और कपिला से "कप्पू घोड़यानी" बन जाती है। हलद्वानी-अल्मोड़ा की सड़क पर उसके घोड़े रात-बिरात चलते रहते हैं, पर मजाल है किसीकी कि उसके पुट्ठे पर हाथ रख जाए। एक मर्दाना रौबदारी उसमें आ जाती है। सास-ससुर को खुद कमाकर खिलाती है। देवरों का पालन-पोषण करती है। उनकी शादियां करवाती हैं और सब जब ठिकाने लग जाते हैं, तब एक गभरू युवान ध्यानसिंह से विवाह कर लेती है जिसको उसने ही एक काबुली पठान के चंगुल से बचाया था। पठान ध्यानसिंह को पीट रहा था। कपिला बीच-बचाव करने जाती है। पठान कपिला से कहता है - "वोई, वोई ये छोकरा तुम्हारा खसम लगता क्या, बेगम? सच्ची बोले तो, औरत तो तुम काबुल के जमीन का माफिक दिखती। वोई, हम भी काबुल का बौत ऊँचा परवत से आया। ऊँचा पेड़ पर का नारियल को बहुत तबियत होता।"[६८] तब कपिला पूरी ताकत से उसकी कनपटी पर एक ऐसा धुमचा मारती है कि पठान वहीं दरी पर औंधा गिर जाता है। कपिला ध्यानसिंह की शादी पर अल्मोड़ा का किशन पंडित कहता है -"यार, जजमानो ! इस बिल्ली के दांत आखिर यह चूहा उखाड़ेगा, ऐसी अनहोनी हम लोगों ने कहां सोची थी।"[६९]

(ड) धर्म-परिवर्तन की समस्या : ---

मटियानीजी की कहानियों में कुमाऊं प्रदेश के लोगों में जो कहीं-कहीं धर्म-पविर्तन के किस्से मिलते हैं, उनका भी चित्रण हुआ है। परंतु उनकी अधिकांश कहानियों में धर्म-परिवर्तन ऊँची जातियों में -विशेषतः

ब्राह्मणों और पंडितों में-दृष्टिगोचर होता है। यह धर्म-परिवर्तन हिन्दू से ईसाई होने का है और उसके पीछे अधिकांशतः प्रेम के किस्से हैं। हिन्दुओं की रूढ़ि चुस्तता उसके मूल में है। आर्थिक दबाव नहीं है। ''चुनाव'' कहानी का कृष्णानंद पंडित है, पर कमला शिल्पकारिन से प्रेम करने के कारण उसे ईसाई धर्म अंगीकार करना पड़ता है। ''गोपुली गफूरन'' कहानी में भी गोपुली शिल्पकारिन से गफूरन (मुस्लिम) हो जाती है। गोपुली को गफूरन बनना पड़ता है, उसके पीछे आर्थिक कारण है। गोपुली का पति मर जाता है, उसके बाद अपने बच्चों को पालने-पोषने के लिए उसके सामने कोई दूसरा रास्ता नहीं था। जाति-बिरादरी का कोई व्यक्ति यदि उसे सहारा देता तो यह नौबत न आती। ''रहमतुल्ला'' कहानी की खिमुली भी पिछड़ी जाति की लड़की है। वह फतेउल्ला नामक मुस्लिम से निकाह पढ़ लेती है। यहाँ भी कारण प्रेम का है।

(ढ) अमानवीयता की प्रवृत्ति : ---

इधर अमानवीयता (Dehumanlization) की प्रवृत्ति बढ़ रही है। यह प्रवृत्ति दो तरफ विकसित हो रही है। एक तरफ अति-भौतिकता के कारण, दूसरी तरफ अति-दरिद्रता के कारण। अति-भौतिकता मनुष्य को संकीर्ण औ स्वकेन्द्रित(Self-Centred) बना देती है, जो अन्ततः उसे अमानवीयता की ओर ले जाती है। अत-दरिद्रता, अति-अन्याय और अति-अत्याचार भी कोई बार मनुष्य को अमानवीयता की ओर ले जाते हैं।

''भय'' कहानी का नायक सीताराम नामक भिखारी के मुर्दे को कहीं से उठा लाता है और उसका इस्तेमाल भीख मंगवाने के लिए करता है। उस पर रोने के लिए वह ननकू की औरतमय दो बच्चों के ले आता है उसकी यह प्रवृत्ति अमानवीय कही जा सकती है। परंतु उसने बचपन से गरीबी, भूखमरी और अपमान ही देखे हैं। वह उस दृश्य को कभी नहीं

भुला पाता कि उसकी माँ उसके मरे हुए पिता के जेबों को तलाश रही थी। कहीं कुछ रुपये मिल जाय ! उस स्त्री की क्या मजबूरियां और विवशताएँ रही होंगी कि ऐसी भयंकर दारूण परिस्थिति में भी उसे अपनी गरीबी की वास्तविकता नहीं भुलती। ''प्यासा'' कहानी का पांडुरंग मामा भिखारियों का ही व्यवसाय करता है। वह मुर्दों को भी खरीदकर बेचता है। भीख मांगने-मंगवाने के लिए भी मुर्दों की जरूरत रहती है। पर पांडुरंग मामा ने भी अपनी जिन्दगी की शुरूआत भीख मांगने से ही की थी। जब से होश संभाला बम्बई की फुटपाथों ने ही उनको पनाह दी। अतः उनमें यदि इस प्रकार की प्रवृत्ति विकसित होती है, तो उसमें अचरज की कोई बात नहीं है।

(ण) उच्च मानवीय मूल्य : ---

परंतु ऐसे गलित-गर्हित समाज में भी लेखक ने कई ऐसे पात्रों को उकेरा है, जिनमें उच्च मानवीय मूल्यों का अहसास हमें होता है। और यही इस लेखक की सबसे बड़ी खूबी है। उसने कीचड़ में खिले कमलों को भी देखा है। एमिल जोला जैसे ठेठ प्रकृतिवादी लेखक ने भी ऐसे गंदे-बीभत्स-बीहड़-पुशवत् परिवेश में कहीं-कहीं मानवता के दीयों को टिमटिमाते हुए बताया है। बड़े लेखक की यह भी एक पहचान है कि वह सामान्य, अति-सामान्य, मामूलियत में से भी असामान्य पात्रों और स्थितियों का निर्माण करता है।

''सतजुगिया आदमी'' का हरराम, ''धुधुतिया त्यौहार'' का देवराम, ''नंगा'' की रेवती, ''एक कॉप चाः दो खारी बिस्किट'' के नसीम और रामन्ना, ''पत्थर''की गफूरन, ''प्यासा'' की कृष्णाबाई, ''मिट्टी'' की गनेशी, ''मैमूद'' की जद्दनबी, ''महाभोज'' की शिवरत्ती, ''प्रेतमुक्ति'' का किशनराम, ''सावित्री'' की सावित्री, ''चुनाव''का कृष्णाकान्त, ''लाटी'' कहानी की लाटी, ''कपिला'' कहानी की कपिला घोड़यानी,

''इल्लेस्वामी'' कहानी का स्वामी आदि ऐसे ही पात्र हैं जिनमें कहीं आद्यन्त तो कहीं अन्त में हमें उच्च मानवीय मूल्यों के दर्शन होते हैं। यहाँ एक वस्तु ध्यातव्य है कि सुख-संपन्नता की स्थिति में तो कोई भी व्यक्ति धर्म का पालन कर सकता है, यद्यपि बहुत-से लोग नहीं करते हैं पर यह दीगर बात है, किन्तु भयंकर दारूण स्थितियों में धर्म का निर्वाह अत्यन्त कठिन कार्य है और ऐसे लोग बिरले होते हैं।

(त) गहराते अधंकार में प्रकाश की किरणें : ---

मटियानीजी के कथा-साहित्य की यह भी एक विशेषता है कि उसमें गहराते अधंकार में प्रकाश की कुछ किरणें मिल जाती हैं। मानवता से उनका विश्वास एकदम उठा नहीं है। यह ''आस्था का सौंदर्य'' उनके समूचे साहित्य में दृष्टिगोचर होता है। ऊपर जिन कहानियों का उल्लेख हुआ है उनमें उस प्रकार के पात्र और स्थितियों हैं जो मानवता की रश्मियों को विकीर्ण करते हैं।

(थ) अंध-विश्वास और ढोंगी साधु-पीर मलंग : ---

शैलेश मटियानी अपने जीवन की उत्तरावस्था में भले दक्षिण पंथी शिविर मे चले गए हों, उनके साहित्य में प्रगतिवादी जीवन-मूल्य शुरू से रहे हैं बल्कि उन्होंने जितना दलित-पीड़ित-शोषित-उपेक्षित-अवहेलित-पराजित मानवता का पक्ष लिया है, प्रेमचंद के अतिरिक्त दूसरा कोई भी साहित्यकार इस संदर्भ में उनसे तुलना नहीं कर सकता। अतः उनके लेखक में पग-पग पर अंध-विश्वासों की प्रचुरता पायी जाती है। कारण अशिक्षा है। ''प्रेतमुक्ति'',''सतजुगिया आदमी'' आदि कहानियों में अंध-विश्वास का चित्रण मिलता है; तो ''चिथड़े'', ''गरीबुल्ला'', ''फर्क,बस इतना है'', ''बिट्ठल'', ''चील'', ''प्यास'', ''इब्बूमलंग'', ''रहमतुल्ला'' जैसी

कहानियों में अनेक स्थानों पर हमें ढोंगी साधु-पीर-फकीर आदि मिलते हैं और वे लोग अंध-विश्वासी अनपढ़ गरीब तथा छद्मधर्मी लोगों को कैसे ठगते हैं उसका व्यंग्यात्मक आलेखन मिलता है।

निष्कर्ष

अध्याय के समग्राकलन से हम निम्नलिखित निष्कर्ष तक सहजतया पहुँच सकते हैं ---

(१) निम्न और दलित जीवन का बड़ा ही गहरा, समीपवर्ती और अपरागत अनुभव मटियानीजी को है। उनका जीवन-संघर्ष यहाँ उनके लेखक के लिए मानो वरदान-स्वरूप हो गया है।

(२) दलित-जीवन के आलेखन के संदर्भ में एक नया आयाम मटियानीजी की एतद्विषयक कहानियों में यह मिलता है कि रूढ़ दलित जातियों के जीवन के अतिरिक्त उनकी अनेक कहानियों में विशेषतः बम्बई के परिवेश की कहानियों में निम्न-से-निम्न प्रकार का जीवन उन्होंने चित्रित किया है जो जातिगत या वर्गगत संस्तरण में कहीं नहीं आता है।

(३) उनकी कहानियों में जहाँ एक तरफ गुण्डों, बदमाशों, जेबकतरों, उठाईगिरों और जुआरियों का संसार मिलता है; वहाँ दूसरी तरफ वेश्याओं, भिखारियों,कोढ़ियों, लूले-लंगड़ों, अपाहिजों का संसार और उनके यथार्थ की तिक्तता के भी दर्शन होत हैं।

(४) स्वयं भुक्तभोगी रहे होने के कारण उनकी अनेक कहानियों में हमें अनाथ बच्चों की कथा-व्यथा, कसक और वेदना मिलते हैं।

(५) उनकी अनेक कहानियों में पुरूष-वेश्यावृत्ति की प्रवृत्ति को लक्षित किया जा सकता है।

(६) उनकी पहाड़ी-परिवेश की कहानियों में तथा इलाहाबाद के परिवेश की कहानियों में जो दलित-जीवन का चित्रण मिलता है, वहाँ दलितों में इधर जो नयी चेतना पनप रही है, उसे रेखांकित किया जा सकता है ।

(७) उपर्युक्त दलितों में पुरानी पीढ़ी के लोगों में ब्राह्मण-पुरोहित पंडित के प्रति एक भय और आतंक का भाव मिलता है । इस वर्ग के प्रति उनके मन में श्रद्धा-भक्ति का भाव है, पर उसके मूल में कहीं भय और आतंक भी है ।

(८) प्रेमचंदजी की ''कफ़न'' कहानी में जो अमानवीयता (Dehumanlization) की प्रवृत्ति बताई गयी है, मटियानीजी की कहानियों में भी यह प्रवृत्ति मिलती है । परंतु यह प्रवृत्ति दोनों वर्गों में मिलती है- अति- भौतिक लोगों में तथा अति-दरिद्र लोगों में ।

(९) इसे मटियानीजी की कहानियों का एक सशक्त पक्ष कहना चाहिए कि यहाँ गहराते अंधकार के बीच भी प्रकाश की कुछ किरणों उच्च मानवीय मूल्यों के रूप में दृष्टिगोचर होती हैं ।

(१०) मटियानीजी में धर्म-परिवर्तन की समस्या ठीक रूप में नहीं मिलती है, जिस रूप में वह प्रेमचंदजी की कहानियों में मिलती है ।

(११) अप्रगतिशील आयामों के प्रति एक खुली व्यंग्य-दृष्टि मटियानीजी की कहानियों में आद्यन्त पायी जाती है ।

: सन्दर्भानुक्रम :

(१) बिट्ठल : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.७९

(२) वही : पृ.८०

(३) दृष्टव्य : पत्थर : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.१४४

(४) दृष्टव्य : फर्क, बस इतना है : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.१०७

(५) दृष्टव्य : हंस : जून-२००१ : पृ.१० तथा २५

(६) प्यासा : त्रिज्या : पृ.११७

(७) वही : पृ.११७

(८) वही : पृ.११७

(९) वही : पृ.११७

(१०) दो दुखों का एक सुख : बर्फ की चट्टानें : पृ.५३६

(११) वही : पृ.५३८

(१२) वही : पृ.५४५

(१३) फर्क, बस इतना है : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.१०७

(१४) मिट्टी : त्रिज्या : पृ.१७४

(१५) चील : त्रिज्या : पृ.१००

(१६) वही : पृ.१०३

(१७) "एक कॉप चा : दो खारी बिस्किट" : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.८४

(१८) रहमतुल्ला : भविष्य तथा अन्य कहानियां : पृ.९६

(१९) इल्लेस्वामी : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.१६

(२०) इब्बूमलंग : त्रिज्या : पृ.१५१

(२१) प्यासा : त्रिज्या : पृ.१२३

(२२) वही : पृ.१२३

(२३) भूमिका : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.१८

(२४) वही : पृ.१९

(२५) बिठ्ठल : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.७७

(२६) "एक कॉप चाः दो खारी बिस्किट" : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.८३

(२७) वही : पृ.८६

(२८) वही : पृ.८६

(२९) इल्लेस्वामी : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.१५

(३०) गरीबुल्ला : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.१५

(३१) फर्क, बस इतना है : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.१०६

(३२) वही : पृ.१०७

(३३) बिट्ठल : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.८०

(३४) वही : पृ.७४

(३५) जिसकी जरूरत नहीं थी : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.१९

(३६) वही : पृ.१९-२०

(३७) वही : पृ.२०

(३८) सतजुगिया आदमी : बर्फ की चट्टानें : पृ.१३०-१३१

(३९) वही : पृ.१३२

(४०) धुधुतिया त्यौहार : बर्फ की चट्टानें : पृ.५५७

(४१) वही : पृ.५५६

(४२) वही : पृ.५५६

(४३) वही : पृ.५५८

(४४) वही : पृ.५६२

(४५) नंगा : बर्फ की चट्टानें : पृ.१६५

(४६) लीक : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.१३२

(४७) हत्यारे : छिद्दा पहलवान वाली गली : पृ.५९

(४८) बर्फ की चट्टानें : बर्फ की चट्टानें (बड़ा संकलन) : पृ.७१

(४९) वही : पृ.७१

(५०) सवा सेर गेहूँ : मानसरोवर-४ : पृ.१३९

(५१) सद्गति : मानसरोवर-४ : पृ.१४

(५२) वही : पृ.१४

(५३) सतजुगिया आदमी : बर्फ की चट्टानें : पृ.१२९

(५४) वही : पृ.१२९

(५५) जनम बेल गैया उसे कहते हैं जो बांझ होती है और जिसके थनों से दूध नहीं फूटता है ।

(५६) सतजुगिया आदमी : पृ.१३०

(५७) वही : पृ.१३१

(५८) वही : पृ.१३१

(५९) वही : पृ.१३७

(६०) वही : पृ.१३७

(६१) नंगा : बर्फ की चट्टानें : पृ.१६५

(६२) पत्थर : मेरी तैंतीस कहानियां : पृ.१४१

(६३) प्यासा : त्रिज्या : पृ.११९

(६४) इब्बूमलंग : त्रिज्या : पृ.१५८

(६५) महाभोज : भविष्य तथा अन्य कहानियां : पृ.९९

(६६) वही : पृ.१०१

(६७) वही : पृ.१०८

(६८) कपिला : बर्फ की चट्टानें : पृ.३८३

(६९) वही : पृ.३८६